जीवन-संदेश

[ख़लील जिब्रान के 'दि प्रोफेट' का अनुवाद]

प्रास्ताविक
काका कालेलकर
अनुवादक
किशोरीरमण टण्डन

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली
—शाखायें—
दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

कवि

विख्यात आयरिश कवि अे अी. (जार्ज रसेल) ने खलील जिब्रान की तुलना हमारे रवीन्द्रनाथ ठाकुर से की है। जिस तरह श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कालिदास के बारे में कवि गटे के अेक सुभाषित का विस्तार करते हुअे तीन विश्वकवियों का सम्मेलन किया है अुसी तरह अे अी ने भी अपने अुक्त अभिप्राय में वर्तमान काल के तीन सर्वोच्च चिंतको का सम्मेलन किया है।

आयर्लैंण्ड, आर्मिनिया और हिन्द, तीनों देशों में अेकसी धारा क्यों बहती है, यह कहना कठिन है। अे अी. का 'अिन्टरप्रिटर्स' खलील जिब्रान का 'दि प्रोफेट' और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि' विश्वसाहित्य में अपना स्थान पा चुके हैं। रवीन्द्रनाथ ने प्रारंभ किया कविता से; किन्तु आगे बढ़ते-बढ़ते वे सर्वांग परिपूर्ण चिंतक और समाजहितैषी हो गये हैं। अे अी. तो कवि भी थे, सामाजिक फिलसुफ भी थे और समाज-सेवक भी थे। खलील जिब्रान की आयुधारा बहुत नहीं बही। पूरे पचास वर्ष भी अुन्होंने अिस दुनिया में पूरे नहीं किये। तो भी अितने में अुन्होंने आर्मिनिया और पूर्व अेशिया के नबीओ की परम्परा हृदयंगत कर ली थी। और अपनी काव्यशक्ति से अुसे जीवित कर दिया था। रवीन्द्रनाथ के साथ खलील जिब्रान

नहीं दीख पड़ते हैं। फूलों के पास अुनका कोअी भी अंग गोपनीय नहीं होता है। अुनका परस्पर मिलन भी गुप्त न होकर किसी महोत्सव का रूप धारण करता है। मनुष्य के छोटे-छोटे बच्चे भी अपनी निर्व्याज सरल-वृत्ति से कमनीयता, प्रसन्नता और पवित्रता का अैसा कुछ रसायन बना देते हैं कि अुनकी प्राकृतिक अवस्था देखते ही हमारा हृदय कोमल, अुन्नत और संस्कार-संपन्न बन जाता है। मनुष्य के नग्न शरीर में फूल-फल की और पशु-पंखी की निर्व्याज मनोहरता और पवित्रता अर्पण करने की शक्ति खलील जिब्रान में जैसी है वैसी रोडिन में है या नहीं, यह कहना कठिन है।

खलील जिब्रान बलिष्ठ कल्पनाशक्ति का कवि है। अेक से अधिक भाषा का शब्द-स्वामी है। गद्यकाव्य की अेक नयी शैली का निर्माता है। मनुष्य हृदय का कुशल परिचायक है।

अितना होते हुअे भी अुसका सच्चा परिचय तो ज्ञानी या सुफी शब्द से ही हम कर सकते है। प्राचीन काल के नबी जब कभी जीवन-रहस्य का अुपदेश करते थे तब वे लोक कथाओं का अुपजीवन करके दृष्टान्त और रूपक की ही भाषा में बोलते थे। खलील जिब्रान ने भी अपने 'मैडमेन'—पागल—में और 'वान्डरर'—अतिथि—में फूलों जैसे नाजुक और प्रेम जैसे हृदयवेधक दृष्टांत ही अिकट्ठा किये हैं। ज्ञानी और सुफी जब बोलते हैं तब

के मुँह मे ञीसा के बारे मे अपनी-अपनी क्या राय थी, अपना-अपना क्या अभिप्राय था, सबकुछ बुलवाया है।

प्रस्तुत 'दि प्रोफेट'–नबी की अल्विदा–अथवा 'जीवन-सन्देश'-में खलील जिब्रान ने अपना विचार-सर्वस्व डाल दिया है। अौर अुसमें जो कुछ बाकी रहा था और व्यक्त किये बिना खलील से रहा नहीं जाता था वह अुसने परिशिष्ट के रूप में अपने 'गुरु का बाग' में—दि गार्डन आव दि प्रोफेट' में—भर दिया है। तब ही जाकर वह कहीं बादल के जैसा पतला विरल होकर विश्वाकाश में विलीन होगया।

लोगों को 'जीवन-संदेश' वाली यह किताब जितनी अच्छी लगती है अुतनी 'गुरु का बाग' वाली रचना अच्छी नहीं लगती। और ञिसमें आश्चर्य भी नहीं है। 'जीवन-संदेश' मे जीवन-स्मृति है जब कि 'गुरु का बाग' मे जीवन-रहस्य और जीवन-काव्य भी ठसाठस भरा है। अुसके लिये दिल और दिमाग की पाचन शक्ति कुछ और किस्म की चाहिये।

'जीवन-संदेश' मे कवि ने ञेक नाममात्र कथा का निर्माण करके अुसके पतले धागे पर जीवन के भिन्न-भिन्न पहलू पर प्रकाश डालने वाले अपने विचार और जीवन-सिद्धान्त पिरो दिये है। ये हैं अुसके विषय—प्रेम, लग्न, बालबच्चे, आदान-प्रदान, खानपान, मेहनत-मजदूरी, सुख-दुख, क्रय विक्रय, गुनाह और सजा, कपड़े और मकान,
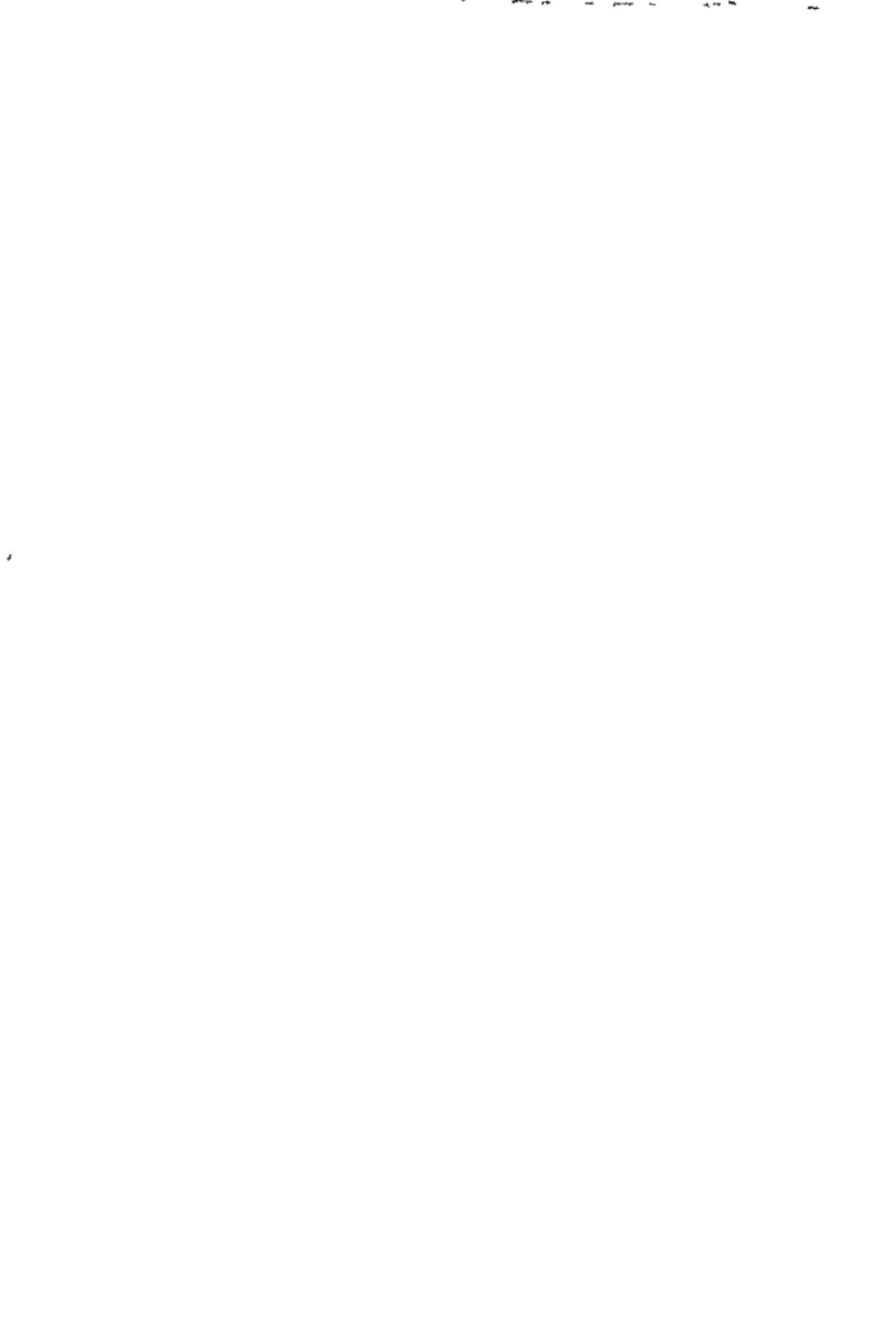
लेखक का परिचय

प्रस्तुत 'जीवन-संदेश' जिस पुस्तक 'दि प्राफेट' (The Prophet) का भाषान्तर है, उसीके गुजराती अनुवाद 'विदाय वेलाये' के अनुवादक श्री किशोरलाल मशरूवाला ने लेखक की कुछ पुस्तकों के मुख-पृष्ठ पर प्रकाशित संक्षिप्त परिचय के आधार पर नीचे लिखी जानकारी संकलित की है:—

कवि, ज्ञानी और चित्रकार खलील जिब्रान (Khalil Gibran) का जन्म सन् १८८३ ईसवी में सीरिया देश के माउन्ट लेबानॉन प्रान्त में हुआ था। यह वही प्रान्त है कि जहाँ यहूदियों के अनेक पैगम्बर पैदा हो चुके हैं। जब कवि की अवस्था बारह वर्ष की हुई तब उनके माता-पिता उन्हें अपने साथ बेल्जियम, फ्रांस और अन्त में अमेरिका ले गये और करीब दो वर्ष उपरान्त वे वापिस सीरिया लौटे, और कवि को बइरुत के अल्-हिकमत मदरसे में दाखिल कराया। सन् १९०३ ई० में वह पुनः यूनाइटेड स्टेट्स गये, और वहाँ पाँच साल रह कर फ्रांस पहुँचे, जहाँ उन्होंने चित्रकला का अध्ययन किया। सन् १९१० ई० में वह फिर अमेरिका गये और फिर जीवन के अन्त तक न्यूयार्क में ही रहे।

इस महान् कवि का देहान्त ४८ वर्ष की उम्र में सन् १६३१ में हो गया। क्या हम वैसी ही आशा करें जैसी कि उसने इस पुस्तक के अन्त में दिलाई है—

"भूल मत जाना मैं फिर वापिस आऊंगा।

"कुछ ही समय उपरान्त मेरी संचित वासना नया शरीर धारण करने के लिए मिट्टी और पानी जमा करेगी।

"कुछ ही समय पश्चात् वायु पर क्षणभर विश्राम लेकर फिर कोई दूसरी माता मुझे धारण करेगी।"

और "उस समय हमारी अधिक बातें होंगी. और तब तुम्हारे भीतर से एक अधिक गूढ़ गीत का आविर्भाव होगा।"

चित्रसूची

जीवन-संदेश

आनन्द की नाद समुद्र में दूर तक फैल गई।[1]

फिर उसने आँखें मूँद लीं और अन्तरात्मा की शांति में डूबकर ईश्वर की आराधना में तल्लीन हो गया।

पर जैसे ही वह टेकरी से उतरने लगा, उस पर उदासी के बादल छा गए। वह सोचने लगा

क्या मैं यहाँ से, बिना जरा भी वेदना अनुभव किए, पूरी शांति से, जा सकूँगा? नहीं, इस शहर को छोड़ते समय मेरी भावना पर घाव हुए बिना न रहेंगे।
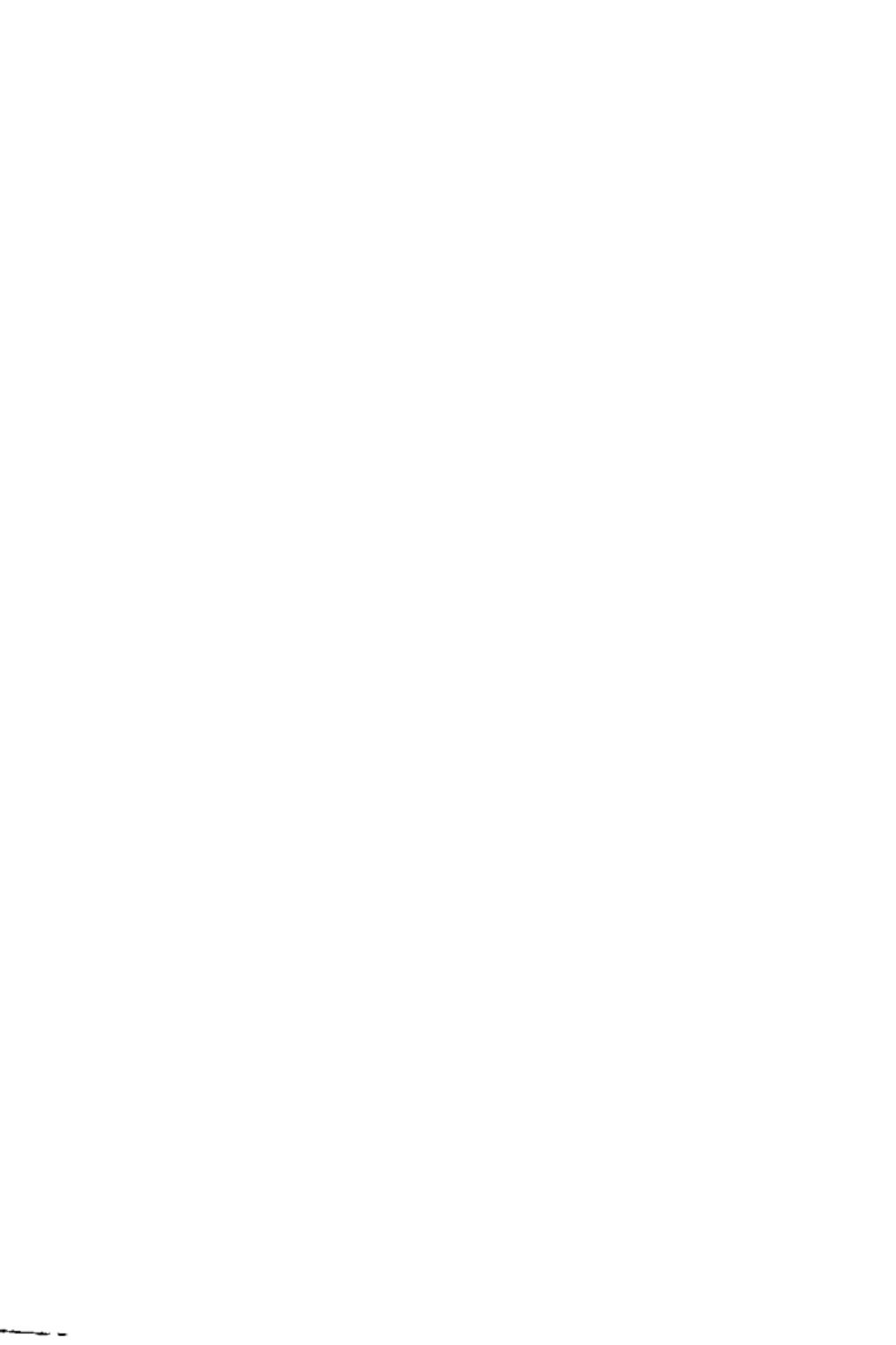
कितने दुखभरे लम्बे-लम्बे[2] दिन इस शहर की दीवारों के भीतर बिताए हैं और कितनी ही सूनेपन से भरी हुई रातें काटी हैं। कौन अपने दुख और सूनेपन से बिना वेदना विदा ले सकता है?

इन गलियों में मैंने भावनाओं के अनन्त कण बिखराए हैं। मेरी लालसाओं के असंख्य बालक इन टेकरियों पर नंगे घूम रहे हैं। इनकी स्मृति का भार और दर्द साथ में ले जाए बिना मैं यहाँ से विदा नहीं ले सकूँगा।

आज जो मैं उतार कर फेंक रहा हूँ यह कोई

१ ज्ञानी को मृत्यु भय नहीं आनन्द का कारण है।
२. प्रभु-वियोग के कारण।

पहनने का कपडा नहीं है। अरे, यह तो अपने ही हाथों से अपना चमड़ा उतार रहा हूँ।

आज जिसे पीछे छोड़े जा रहा हूँ, वह केवल एक कल्पना ही नहीं है, बल्कि एक ऐसा हृदय है जिसे भूख और प्यास ने मधुर बनाया है।

फिर भी मैं ज्यादा देर नहीं लगा सकता।

सबको अपनी गोद में बुला लेने वाला समुद्र[1] मुझे भी बुला रहा है, इसलिए मुझे प्रस्थान करना ही पड़ेगा।

जब जीवन की घड़ियाँ रात्रि के समय भी जलने लगें (असह्य हो उठे), तब भी ठहरे रहना तो जम जाना, ठोस हो जाना और मिट्टी का ढेला बन रहना है।[2]

जी तो करता है कि यहाँ का सबकुछ अपने साथ ले चलूँ। लेकिन यह सम्भव हो तब न?

शब्द, जो जीभ और ओठों से पंख पाता है, क्या उन्हें भी साथ लेकर उड़ सकता है? उसे तो अकेले ही आकाश के छोर नापने पड़ते हैं।

१. काल २. समय आने पर प्राणी का मृत्यु से छुटकारा पाने का प्रयत्न चारों ओर दारू के पहाड़ों के बीच आग जलाकर जीवन-रक्षा करने के प्रयत्न-सा है।

और गरुड़ को भी, अपना नीड़ छोड़ कर, एकाकी सूर्य की ओर उड़ना पड़ता है।

(इस तरह विचार करते हुए) वह टेकरी की तली में पहुँचा और घूम कर फिर समुद्र पर नज़र डाली। देखा कि जहाज़ बंदर के निकट पहुँच रहा है। जहाज़ के अगले भाग पर बैठे हुए अपने देश के नाविकों को उसने पहचान लिया।

उसकी आत्मा उनके लिए पुकार उठी—मेरी सनातन माँ की सन्तानो ! ओ समुद्र की तरंगों और तूफ़ानों पर सवारी करने वालो !!

न जाने कितनी बार मेरे स्वप्नों में तुम जहाज़ चलाते हुए दिखाई दिए हो। आज तुम मेरी जाग्रति में आए हो, जो कि और भी गहरा स्वप्न है।

चलने के लिए मैं तैयार खड़ा हूँ। और यात्रा के मेरी आतुरता के खुले पाल पवन की राह देख रहे हैं।

केवल एक श्वास इस निश्चल वायु में और लूँगा केवल एक चाहभरी निगाह पीछे की ओर और डालूँगा।

उसके बाद मैं खड़ा हूँगा तुम्हारे बीच—तुम नाविकों में एक नाविक बन कर।

ओ विस्तृत समुद्र-लक्ष्मी, अयि निद्रालीन माँ ! केवल तुम ही नदियों और निर्झरों को शांति और मुक्ति का आश्रय हो।

यह झरना केवल एक चक्कर और लेगा, इस वन-वीथिका में एक कल-रव और भरेगा—उसके बाद मैं तुम्हारे पास जा पहुँचूगा।

असीम बिन्दु सीमाहीन सिंधु में मिल जावेगा।'[1]

जैसे ही वह आगे बढ़ा, उसने देखा कि दूर-दूर से दल-के-दल स्त्री-पुरुष अपने खेत, खलिहान और द्राक्ष-कुँजो को छोड़-छोड़कर नगर-द्वार की ओर जल्दी-जल्दी बढ़े आ रहे हैं।

उसने सुना कि वे उसका नाम ले रहे हैं। खेत-खेत, पुकार-पुकार कर एक-दूसरे से उसके जहाज के आने की बात कह रहे हैं।

वह विचारने लगा

ये विदा होने की घड़ियाँ क्या जमघट लगने का अवसर बनेगी ?

और मेरी संध्या ही वास्तव में मेरा प्रभात है, यह समझा जावेगा ?

उनसे मैं क्या भेंट दूँ जो हलों को भूमि में अधगड़े ही छोड़कर अथवा अंगूर का रस निकालने वाले कोल्हुओं

१ जीव चैतन्य का बिन्दु है। ईश्वर समुद्र है। दोनों ही चैतन्य रूप हैं इसलिए दोनों अनन्त हैं।

इतनी बातें तो भाषा का चोला पहनकर उसके मस्तिष्क में आईं। शेष न जाने क्या-क्या भाषा का आकार पाए बिना ही हृदय में रह गया, क्योंकि अंतरतम की गुह्यतम भावनाओं को व्यक्त करने में वह असमर्थ रहा।

जैसे ही उसने नगर में प्रवेश किया, सभी नगर-निवासी उससे मिलने के लिए आगे आए। सब एक स्वर से उसे ही पुकार रहे थे।

पहले नगर के बड़े-बूढ़े सामने आकर बोले :

आप अभी से हमें छोड़कर न जाइए।

आप हमारी जीवन-सन्ध्याओं में मध्याह्न-रूप रहे हो और आपकी जवानी ने हमारे सपनों को सच्चा किया है।[1]

आप हमारे बीच कोई परदेशी और पराये नहीं हैं, बल्कि हमारे सगे और लाडले पुत्र हैं।

अभी न हमारी आत्मा को अपने दर्शनों की प्यास से मत तड़पाओ।

[1] सन्ध्या—अज्ञान की। मध्याह्न—ज्ञान का। जवानी—उत्साह ज्ञान का। स्वप्न—उच्च अभिलाषाएँ। हम अज्ञान और निराशा में घिरे हुए थे। आपने ज्ञान और आशा से परिपूर्ण किया था।

तब उस देवालय मे से एक स्त्री बाहर आई। उसका नाम था अलमित्रा। वह एक सती थी।

उसने उस सती की ओर बड़ी कोमल दृष्टि से देखा, क्योंकि जब उसे उस नगर में आए केवल एक दिन हुआ था, तब यही पहली महिला थी जिसने उसे पहचाना और उसमे विश्वास किया था।

वह उसका अभिनन्दन करती हुई बोली.

हे प्रभु के पैगम्बर! अनन्त की खोज के लिए, अपने जहाज की तलाश करते हुए, आपको दूर-दूर की खाक छाननी पड़ी है।

अब आपका जहाज आ पहुँचा है और अब जाने मे ही आपका छुटकारा है।

अपने पूर्व-स्मृतियो से परिपूर्ण प्रदेश. अपने महत्तर अभिलाषाओं के आश्रय-स्थान को जाने की आपकी उत्कण्ठा अत्यन्त तीव्र है। इसलिए हमारा प्रेम आप पर बन्धन नहीं डालेगा. न हमारी आवश्यकताएँ आपको पकड़ कर रक्खेगी।

फिर भी, इसके पहले कि आप हमे छोड़कर जावे, हम आपसे प्रार्थना करते है कि आप हमे अपने अमृत-वचन सुनावे और अपने सत्य के भण्डार मे से कुछ हमे भी प्रदान करें।

वह सत्य हम अपनी सतानो को देगे. और वे अपनी

संतानों को। इस तरह उसका कभी नाश न होगा।

आप अपने एकान्त में हमारे दैनिक जीवन को देखते रहे हैं, और अपनी जाग्रति में हमारी निद्रा का रुदन और हास्य सुनते रहे हैं।'

अतएव अब आप हमें हमारा ही परिचय दीजिए। जीवन और मरण के बीच जो कुछ है, उसके विषय में आपने जो जान पाया है, वह हमें भी बताइए।

तब उसने उत्तर दिया :

हे ऑरफालीज वासियो, आपके हृदय में जिन बातों का तूफान उठ रहा है, उनके सिवाय मैं आपको और किस विषय पर कुछ कह सकता हूं ?

* [illegible]

: २ :

प्रेम

तब मित्रा ने कहा : अच्छा, प्रेम के विषय मे कुछ कहिए ।

तब उसने अपना मस्तक ऊँचा किया, लोगों पर दृष्टि डाली, और जब सब पर शांति छा गई, तब वह ऊँचे स्वर में बोला :

जब तुम्हे प्रेम इशारा करे तो उसका अनुगमन करो,
भले ही उसकी राह विकट और विषम हो ।

जब उसके पंख तुम्हे ढक लेना चाहे, तो तुम आत्म-समर्पण कर दो,
भले ही उन पंखो के नीचे छिपी तलवारे तुम्हे घायल करे ।

जो कुछ वह कहे उसका विश्वास करो,
भले ही जिस तरह झँझावात उपवन को तहस-नहस कर देता है, उस तरह उसकी वाणी तुम्हारे स्वप्नों को छिन्न-भिन्न कर डाले ।

क्योकि जो प्रेम तुम्हारे सर पर ताज रखता है,

द्वारा जगज्जीवन के हृदय का एक अंश बन सको।

लेकिन यदि भय-वश, तुम केवल प्रेम की शान्ति और प्रेम के उल्लास की ही कामना करते हो,

तो, तुम्हारे लिए यही भला है कि तुम अपने छिलकों में घुस जाओ और प्रेम की खलिहान से बाहर हो जाओ,

और ऋतुहीन[1] संसार में जा बसो, जहाँ तुम हँस तो सकोगे, लेकिन खुले दिल से नहीं, जहाँ तुम रो भी सकोगे, लेकिन अपने सम्पूर्ण आँसुओं के साथ नहीं।

प्रेम प्रेम के सिवाय न तो कुछ देना ही जानता है और न कुछ लेना ही।

प्रेम न तो किसी का स्वामी है और न किसी की सम्पत्ति ही।

क्योंकि प्रेम प्रेम ही से परिपूर्ण है।

जब तुम प्रेम करो तब यह न कहो, "ईश्वर मेरे हृदय में है।" बल्कि कहो, "मैं ईश्वर के हृदय में हूँ।"

और कभी न सोचना कि तुम प्रेम को पथ प्रदर्शित कर सकते हो, क्योंकि यदि तुम्हें अधिकारी समझता है तो प्रेम स्वयं तुम्हें राह दिखाता है।

१ परिवर्तनहीन, जीवनहीन।

प्रेम प्रेम से भरपूर रहने के सिवाय कोई कामना नहीं रखता।

यदि प्रेम करते हुए भी तुम कामनाओं से छुटकारा न पा सको तो तुम्हारी ये कामनाएँ हों :

मैं द्रवित हो सकूँ—बहते हुए झरने की तरह रजनी को सुमधुर गीत से भर सकूँ।

करुणा की गहराई से उत्पन्न होने वाले दुख को मैं अनुभव कर सकूँ।

अपने प्रेम की अनुभूति से मैं घायल रहूँ।

अपनी इच्छा से हँस-हँस कर मैं अपना रक्त-दान कर सकूँ।

प्रभात-वेला में जब मैं जागूँ तो मेरे हृदय के पंख खुले हुए हों, और प्रेम का अनुभव लेने को मुझे एक दिन और मिला, इसके लिए प्रभु का आभार मानूँ।

दोपहर को विश्राम करते हुए भी प्रेम के ध्यान में निमग्न हो सकूँ।

संध्या-समय प्रभु को धन्यवाद देता हुआ घर आ सकूँ।

फिर रात्रि को अपने प्रियतम की मनुहार हृदय में भर कर, ओठों पर उसकी प्रशंसा के गीत लेकर सो सकूँ।

: २ :

विवाह

इसके बाद मित्रा ने फिर सविनय पूछा :

और विवाह के विषय में, महात्मन ?

उसने उत्तर दिया :

तुम दोनो[1] एक साथ जन्मे हो और सदैव साथ-साथ रहोगे।

जिस समय मृत्यु के बर्फ-जैसे श्वेत पंख तुम्हारे संयोग की घडी को छिन्न-भिन्न कर देंगे उस समय भी तुम साथ-साथ ही रहोगे।

सत्य ही प्रभु की प्रशान्त स्मृति में भी तुम दोनो का स्थान एक साथ ही रहेगा।

फिर भी तुम्हारे सामीप्य में कुछ अंतर होना ही चाहिए,

जिससे कि तुम दोनो के बीच में स्वर्ग की समीर विहार कर सके

१ दम्पती

तुम एक-दूसरे से प्रेम करो, लेकिन प्रेम को बेड़ी न बनने दो।

बल्कि इसे, दोनों की आत्माओं के किनारों के बीच तरंगित महासमुद्र बना फैला रहनेदो।

तुम एक-दूसरे का प्याला भरो, लेकिन एक ही प्याले से न पियो।

तुम एक-दूसरे को अपनी-अपनी रोटी में से भाग दो, लेकिन एक ही रोटी में से दोनों ग्रास न तोड़ो।

साथ-साथ गाओ, नाचो, हर्षोन्मत्त हो, फिर भी तुम में से प्रत्येक एकाकी रहे,

जिस तरह वीणा के तार एक ही राग में बजते हुए भी एक-दूसरे से अलग-अलग रहते हैं।

तुम अपने हृदय अर्पित करो, लेकिन एक-दूसरे के संरक्षण में न रक्खो।

क्योंकि, केवल जगज्जीवन के हाथ ही तुम्हारे हृदयो को रखने के अधिकारी हैं।

तुम साथ-साथ खड़े हो, लेकिन एक-दूसरे से सट कर नहीं

देखो, मन्दिर के स्तम्भ अलग अलग खड़े हैं,

और देवदार तथा सागौन एक-दूसरे की छाया में नहीं उगते।

: ४ :

बालक

इसके बाद एक युवती, जो एक नन्हें बालक को छाती से लगाए हुई थी, बोली :

अब बालकों के विषय में कुछ कहिए।

इस पर वह बोला :

तुम्हारे बालक तुम्हारे अपने बालक नहीं हैं।

जगज्जीवन की जो आत्म-प्रकाशन की कामना है, ये तो उसी कामना की संतानें हैं।

वे तुम्हारे द्वारा आते हैं, लेकिन तुम में से नहीं,

यद्यपि वे तुम्हारे साथ रहते हैं, फिर भी वे तुम्हारी सम्पत्ति नहीं हैं।

तुम इन्हें अपना प्रेम भले ही दो, लेकिन अपनी कल्पनाएँ न दो,

कारण कि इनके पास इनकी निजी कल्पनाएँ हैं।

तुम भले ही इनके शरीर के लिए घर बनवा दो, लेकिन इनकी आत्मा के लिए नहीं,

क्योंकि इनकी आत्मा तो भावी के भवन में रहती है, जिसकी झलक तुम्हें स्वप्न में भी नहीं मिल सकती।

तुम इनके सदृश होने का प्रयत्न भले ही करना, लेकिन इन्हें अपने अनुरूप बनाने की चेष्टा न करना।

तुम वे धनुष हो, जिनके द्वारा बालक-रूपी जीवित बाण छोड़े जाते हैं।

वह धनुर्धर, अनन्त के पथ पर निशाना ताक कर, तुम्हें अपनी महान् शक्ति से झुकाता है, जिसमे कि उसके छोड़े हुए तीर दूर तक तीव्र गति से जा सकें।

उस धनुर्धर के हाथों तुम्हारा यह झुकाया जाना आनन्दमय हो;

क्योंकि जिस प्रकार वह उड़कर जाने वाले बाण को प्यार करता है, उसी प्रकार वह एक स्थान पर रहने वाले धनुष को भी चाहता है।

: ५ :

दान

तब एक धनवान व्यक्ति ने कहा :

दान के सम्बन्ध में भी कुछ कहिए।

उसने उत्तर दिया :

जब तुम अपनी संचित सम्पत्ति में से कुछ देते हो, तो वह दान 'नहीं' के तुल्य है।

सच्चा दान तब होता है, जब तुम अपने जीवन ही का अंश देते हो।

कारण, तुम्हारी ये सम्पत्तियाँ हैं ही क्या? केवल "कहीं कल[1] इनकी आवश्यकता न पड़ जाय" इस भय से संचित और रक्षित की हुई वस्तुएँ।

और कल? कल उस सियाने कुत्ते को क्या देगा जो तीर्थ-यात्रियों के दल का अनुगमन करते हुए भी कल की चिंता में चिन्ह-रहित रेतीले मार्ग में स्थान-स्थान पर हड्डियाँ गाड़ता जाता है।

१. भविष्य में।

और अभाव का भय ही क्या स्वयं एक अभाव नहीं है ?

सामने कुँआ भरा हुआ है, फिर भी तुम्हें 'प्यास' का डर है। क्या यह[1] स्वयं ऐसी प्यास[2] नहीं है जिसका बुझना असम्भव है ?

कई लोग अपने विपुल संग्रह में से थोड़ा-सा दान देते हैं, और आशा करते हैं उससे उनकी क़दर हो। यह परदे में छिपी हुई लालसा उनके दान को अशिव बना देती है।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनके पास थोड़ा ही है, लेकिन वे सबकुछ दे डालते हैं।

ये ही लोग हैं जो जीवन पर और जीवन के अक्षय भंडार पर विश्वास करते हैं, और उनकी थैली कभी खाली नहीं होती।

ऐसे भी लोग हैं जो खुश होकर देते हैं, और यही ख़ुशी उनके लिए उपहार है।

और ऐसे भी लोग हैं जिन्हे देने मे दुःख होता है, और यही दुःख उनके लिए दीक्षा[3] है।

और कुछ ऐसे भी हैं जिन्हे देने में न तो दुःख ही होता है और न हर्ष ही और न वे पुण्य कमाने के इरादे से ही देते हैं।

१. ऐसी मनोदशा। २. तृष्णा। ३. उन्हें शिक्षा देता है।

उनका दान ऐसा है, जैसे विजन के फूल दशों दिशाओं में अपना सौरभ लुटा देते हैं।

ऐसे लोगों के हाथों में ईश्वर का आदेश बोलता है और उनकी आँखों के पीछे खड़ा होकर वह पृथ्वी पर अपनी मधुर मुसकान छिटकाता है।

मांगने पर देना अच्छा है, लेकिन बिना मांगे, केवल मन की वाणी सुनकर, देना ज्यादा अच्छा है।

जिसके हाथ खुल[1] गए हैं, उसे दान लेने वाले अभाव-आकुल पात्र की खोज में दान देने से भी अधिक खुशी मिलती है।

और तुम्हारे पास ऐसा है ही क्या जिसे तुम अपने पास रख सकते हो?

जो कुछ तुम्हारे पास है वह सब एक न एक दिन देना तो पड़ेगा ही

इसलिए जो कुछ देना है, अभी दे छोड़ो, जिससे दान देने का शुभमुहूर्त तुम्हें ही प्राप्त हो जाय, तुम्हारे वारिसों को नहीं।

तुम प्रायः कहा करते हो 'मैं दान दूंगा अवश्य, किन्तु सुपात्र देख कर।'

१. जो उदार हृदय हो गया है।

लेकिन तुम्हारी वाटिका के वृक्ष तो ऐसा नहीं कहते और न तुम्हारे चारागाह की भेड़े ही।

वे देते हैं, क्योंकि वे जीना चाहते है और रख छोड़ना ही मृत्यु है।

जिसने प्रभु से दिवस और रात्रियो का दान पाया है, वह तुम से भी सबकुछ पाने का पात्र है।

और जो जीवन-समुद्र से जल पीने के योग्य समझा गया है उसे तुम्हारे छोटे से झरने के पानी से भी अपना प्याला भरने का अधिकार है।

इससे बड़ा उजाड़[1] क्या हो सकता है कि कोई दान लेने की हिम्मत और भरोसा, नहीं-नहीं, उदारता दिखाता है।

और तुम होते ही कौन हो कि तुम्हारे सामने कोई अपनी छाती खोल कर रक्खे? और अपने स्वाभिमान का घूँघट खोले, ताकि तुम उनकी पात्रता को नग्नरूप में और उनके आत्मगौरव को बेशर्म अवस्था में देख सको।

पहले यह तो पता लगाओ कि तुम दाता बनने अथवा दान देने के साधन बनने के योग्य भी हो।

कारण, सत्य तो यह है कि जीवन ही जीवन को

१. जिसने माँगने का साहस किया है वह निश्चय ही आत्म-प्रसन्न है, उजड़ा हुआ है, दान पाने का अधिकारी है।

देता है, और तुम जो अपने आपको दाता मान बैठते हो, केवल एक गवाह हो !

और हे लेने वालो—और तुम सभी लेने वाले हो[1]—अपने ऊपर कृतज्ञता का बोझ भी न लादो, अन्यथा तुम अपने साथ दाता के कंधे पर भी जुआ का बोझ लादोगे।

दाता के साथ तुम भी उसके दान पर सवारी करके ऊपर उठो, मानो तुम्हे पंख मिल गए हों।

दाता के दान के ऋण का आवश्यकता से अधिक ध्यान रखना उसकी दान-शीलता पर अविश्वास करना है जिसे पृथ्वी जैसी उदार माता और ईश्वर जैसा महान पिता उपलब्ध है।

१. यह वाक्यांश सुनने वालों को संबोधित है। वास्तव में संसार का प्रत्येक प्राणी प्रभु के आगे भिखारी के रूप में है

: ६ :

खान-पान

इसके बाद एक बूढ़ा सरायवाला बोला :

हमें खाने पीने के विषय में भी कुछ उपदेश दीजिए।

तब वह बोला :

क्या ही अच्छा होता यदि तुम पृथ्वी की सुवास लेकर और अमरलता[1] की भांति केवल किरणों का रस पीकर जी सकते?

फिर भी यदि पेट भरने के लिए तुम्हें हिंसा करना और प्यास बुझाने लिए के नवजात बछड़े से उसकी माँ का दूध लूटना ही पड़ता है, तो यह कार्य प्रभु की पूजा के रूप में करो।

अपने थाल को बलिवेदी मानकर उस पर जंगल

१. अमरलता एक लता है, जो वृक्षों पर छत की तरह छाई रहती है। भूमि में उसकी जड़ नहीं होती, फिर भी वह हरी रहती है।

और मैदान के शुद्ध और निर्दोप जीवधारियो की उसके लिए वलि दो जो मनुष्य में विशेप शुद्ध और विशेप निर्दोप वस्तु है।

किसी जीव को हलाल करते समय उससे अपने मन में कहो :

"जो शक्ति तुम्हारा वध कर रही है, उसीने मुझे भी मार रक्खा है, इसलिए मेरा भस्म हो जाना अनिवार्य्य है।

"कारण जिस कानून ने आज तुम्हे मेरे हाथों मे सौपा है, वही मुझे भी मुझ से अधिक वलवान शक्ति के हाथों मे सौंपेगा।"

तुम्हारा रक्त और मेरा रक्त, दोनों ही ब्रह्माण्ड के वृक्ष का पोपण करने वाले रस के सिवाय है ही क्या ?

और जव कभी कोई फल अपने दाँतो से चवाओ तो मन मे कहो :

"तुम्हारे वीज मेरे शरीर में उगेगे।"

"और तुम्हारी भावी कलियाँ मेरे हृदय मे खिलेगी।"

"और तुम्हारी सुगन्धि मेरी श्वास होगी।"

"फिर हम तुम दोनो मिलकर सव ऋतुओ में साथ-साथ आनन्द लूटेगे।"

और फसल काटने के समय जव तुम द्राक्ष-कुंज के अँगूरो को जमा करके कोल्हू मे डालो तो अपने हृदय

में कहो :

"मैं भी तो एक द्राक्ष-कुंज हूँ और मेरे भी फलों को कोल्हू में पेरने के लिए जमा किया जावेगा।

"और नई मदिरा की तरह मुझे अविनाशी घटों में बंद रक्खा जावेगा।"

और शीत-काल में जब तुम शराब खींचो, तब प्रत्येक शराब के प्याले के लिए तुम्हारे हृदय में गीत स्फुटित हो।

और उन गीतों में—पतझड़ के दिन, द्राक्ष-कुंज और द्राक्ष-कोल्हू की मधुर स्मृतियाँ निहित हों।

: ७ :

श्रम

तब एक हलवाहा बोला :

अब श्रम के सम्बन्ध मे हमें समझाइए।

इसके उत्तर में उसने कहा :

तुम श्रम करो, ताकि तुम जगत की और जगतात्मा की चाल के साथ रह सको।

कारण, आलसी होने का अर्थ है ऋतुओं से अपरिचित रहना, और जीवन का जो जुलूस गौरव और अभिमानभरे आत्मार्पण की भावना से अनन्त की ओर बढ़ रहा है, उससे अपने आपको अलग हटा लेना।

जब तुम कार्य करते हो, उस समय तुम एक वंशी बने होते हो, जिसके अन्तर से गुजर कर क्षणो की काना-फूँसी संगीत बन जाती है।

और जब शेष सभी मिलकर एक स्वर से गा रहे हो, तब तुम में से ऐसा कौन होगा जो मूक और चुप

ठूँठ बने रहना पसन्द करे।

तुम्हे सदा यही कहा गया है कि श्रम करना अभिशाप है और मजदूरी करना दुर्भाग्य।

लेकिन मेरा कहना है कि जिस समय तुम श्रम करते हो उस समय तुम जगत् के उच्चतम स्वप्न के एक भाग को पूरा करते हो, जो स्वप्न अपने जन्म के दिन ही तुम्हारे नाम लिख दिया गया था।

मेहनत करने का अर्थ है जीवन से सच्चा प्रेम।

और श्रम के द्वारा जीवन से प्रेम करने का अर्थ है जीवन के अन्तराल मे छिपे गूढ़तम रहस्यो मे घनिष्ठता चढ़ाना।

किन्तु यदि तुम दुःख से ऊब कर, अपने जगत में आने को जजाल और शरीर के निर्वाह को ललाट पर लिखा अभिशाप मानते हो, तो मेरा भी तुम से यह कहना है कि केवल तुम्हारे ललाट का पसीना ही, तुम्हारे ललाट के अक्षरो को धो सकेगा।[1]

तुम्हे यह भी सिखाया गया है कि जीवन तो अंधकार है, लेकिन ये तो किसी थके हुए व्यक्ति के विचार हैं, जिन्हे कि तुम भी थकावट की अवस्था में दुहराते हो।

१. श्रम के द्वारा ही तुम अपना भाग्य बदल सकते हो

और मैं भी कहता हूँ, वास्तव में जीवन अंधकार ही है, यदि उसमें अंत प्रेरणा नहीं है।

और वह अंत प्रेरणा भी अंधी है यदि उसे ज्ञान की आँखे प्राप्त नहीं।

और वह कर्म भी मिथ्या है जो कर्म-विहीन है।

और कर्म भी बेकार है जिसमें प्रेम का अभाव है।

और जब तुम प्रेम-पूर्वक मजदूरी करते तब तुम अपने आप को अपनी आत्मा के साथ, एक-दूसरे के साथ और ईश्वर के साथ संयोग की गाँठ से बाँधते हो।

और प्रेम से की हुई मेहनत क्या है ?

यह है, तुम्हारे हृदय की रुई से काते हुए सूत से, वस्त्र बुनना, मानों स्वयं तुम्हारा प्रियतम इसे पहनेगा।

यह है, स्नेह-सहित एक घर का निर्माण करना, मानों स्वयं तुम्हारा प्रियतम इसमे निवास करेगा।

यह है, तुम्हारा सम्हाल-सम्हाल कर बीज बोना और हर्ष-सहित फसल काटना, मानों स्वयं तुम्हारा प्रियतम उन्हे खावेगा।

यह है, जिस चीज में हाथ लगाना, उसे प्राणों के श्वास से, सजीव कर देना।

यह है, तुम्हारे स्वर्गवासी पूर्वजो को, तुम्हारे आस-पास खडे होकर, तुम्हारे कार्यों का निरीक्षण करते हुए अनुभव करना।

तुम प्रायः, नींद मे बड़-बड़ाते हुए-से, कहते हो, "जो शिल्पी संगमरमर पर काम करता है और प्रस्तर मे अपनी आत्मा की तस्वीर उतारता है, वह खेत में हल चलाने वाले किसान से श्रेष्ठ है।

"जो[1] पट पर मानव की आकृति में परिवर्तित करने के लिए आकाश से इन्द्रधनुष छीन लेता है वह तुम्हारे पैरो की जूतियाँ बनाने वाले से श्रेष्ठ है।"

लेकिन मैं नींद में नहीं, बल्कि धोले-दोपहर की जाग्रति मे कहता हूँ कि हवा जितने प्यार से घास के छोटे-छोटे तिनको से बात करती है, उतने प्यार से देवदार जैसे विशाल वृक्षो से नहीं।

और श्रेष्ठ तो वही है जो वायु की मन-मन को संगीत मे बना देता है और अपने प्रेम के जादू से उस मे माधुर्य्य भरता है।

श्रम तो प्रेम को रूप देना है।

यदि तुम प्रेम को चाह के साथ न कर सको, बल्कि बेगार टालो, तो तुम्हारे लिए यही बेहतर है कि तुम अपना काम छोड़ दो और मंदिर की सीढ़ियों के पास

१. चित्रकार।

जा बैठो और उनके आगे हाथ पसारो जो श्रम करने में आनन्द पाते हैं।

यदि तुम लापरवाही से रोटी सेकोगे तो वह कड़वी होगी, उससे खाने वाले की आधी भूख भी कठिनाई से मिटेगी।

यदि तुम अंगूर का रस खींचने से चिढ़ते हो, तो तुम्हारी यह चिढ़, तुम्हारी बनाई मदिरा मे विष घोल देगी।

और भले ही तुम ऐसा गाते हो मानो गंधर्व ही गा रहे हो, फिर यदि तुम्हे गाने से प्रेम नहीं है, तो तुम दिन के कोलाहल और रात्रि की आवाजों से मनुष्य के कान खाओगे।

: ८ :

हर्ष और शोक

तब एक स्त्री ने कहा :

अब हमसे हर्ष और शोक के संबन्ध में कुछ कहिए।

इस पर उसने उत्तर दिया :

तुम्हारा हर्ष ही शोक का नग्न रूप है।

और कुँआ जिसमें से तुम्हारा हर्ष ऊपर उमड़ता है, अनेक बार तुम्हारे आँसुओं से लबालब भरा रहा है।

और इसके सिवाय हो ही क्या सकता है ?

यह शोक तुम्हारे जीवन में जितनी गहरी कटाई करता है, उतना ही अधिक हर्ष तुम उसमें भर सकते हो।

वह प्याली, जिसमें तुम्हारी मदिरा भरी हुई है, क्या वही प्याली नहीं है, जो कुम्हार के अवे की आग में पकाई गई है ?

और तुम्हारे हृदय को रस से सींचने वाली वंशी

क्या वह बाँस का टुकड़ा नहीं है जिसे चाकू से छेद-छेद कर पोला किया गया है ?

जब तुममें हर्ष की उमंगे उठें तब ज़रा अपने हृदय की तह में डूब कर देखो, तुम्हें ज्ञात होगा कि इस समय तुम्हे हर्ष देने वाला भी वही है जिसने तुम्हें शोक दिया था।

और जब तुम शोक में डूबे हुए हो, तब फिर अपने अंततम में झाँको, वहाँ तुम देखोगे कि तुम उसी के लिए रो रहे हो, जिसके लिए तुम हर्ष से फूले न समाते थे।

तुम में से कुछ लोग कहा करते हैं, "हर्ष शोक से श्रेष्ठ है।" दूसरे कहते हैं, "नहीं, शोक श्रेष्ठ है।"

लेकिन मैं कहता हूँ, इन दोनों को एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता।

ये दोनो साथ-ही-साथ आते हैं और यदि उनमें से एक भोजन करते समय तुम्हारे साथ बैठा है, तो याद रक्खो कि दूसरा भी तुम्हारे बिस्तर पर नींद ले रहा है।

वास्तव में, तुम तराजू की तरह, हर्ष और शोक के बीच में लटके हुए हो।

और केवल उस समय जबकि तुम बिलकुल ख़ाली

: ६ :

घर

तब एक राज आगे आया और बोला :

अब हमें घर बनाने के विषय में ज्ञान दीजिए।

इस पर उसने उत्तर दिया :

शहर के भीतर घर बनाने के पहले अपनी कल्पनाओ का कुँज जंगल में बनाओ।

कारण, जैसे साँझ होते ही तुम्हारे कदम घर की ओर उठने लगते हैं, वैसे ही दूर देशों मे एकाकी घूमने वाला तुम्हारा अंतर्वासी भी घर को वापस आने के लिए आतुर होता है।

तुम्हारा घर तुम्हारी काया का जरा बड़ा रूप है।

वह सूर्य के प्रकाश में बढ़ता है, और रात्रि की निस्तब्धता मे सोता है, और क्या तुम्हारा घर भी स्वप्न नहीं देखता ? और क्या स्वप्न में शहर छोड़कर वन और गिरि-शिखरों की सैर नहीं करता ?

जी करता है कि तुम्हारे घरो को मुट्ठी में भरलूँ,

बंधन से छुड़ा कर तीर्थ-रूप पावन गिरि-शिखर पर पहुँचाने वाला, सौन्दर्य तुमने रख छोड़ा है ?

बताओ, हैं तुम्हारे घर में ये चीजें ?

या तुमने केवल भोग और भोग की लिप्सा रख छोड़ी है, जो लिप्सा घर मे मेहमान बनकर घुसती है, फिर मेजबान बन बैठती है और अंत में घर की स्वामिनी ही बन जाती है ?

इतना ही नहीं, वह तुम्हे पालतू पशु बनाती है और छल-छद्म के अंकुश से तुम्हारी महत्तर आकांक्षाओं को कठपुतली की तरह नचाती है।

यद्यपि उसके हाथ रेशम के हैं, लेकिन उसका हृदय फौलाद का है।

वह तुम्हे लोरियाँ देकर सुला देती है, सिर्फ इसलिए कि तुम्हारी खाट के पास खड़ी होकर, तुम्हे अपने शरीर पर जो अभिमान है, उसकी वह हँसी उड़ा सके।

फिर वह तुम्हारी स्वस्थ चेतनाओं का मजाक उड़ाती है और कच्चे घड़े की तरह उनके टुकड़े-टुकड़े कर देती है।

वास्तव में, भोग-लिप्सा आत्मा की भावना को मार डालती है और श्मशान-यात्रा मे भी उसके शव के पीछे-पीछे दाँत पीसती हुई चलती है।

: १० :

वस्त्र

इसके बाद एक जुलाहे ने कहा :

अब वस्त्रों के विषय में कुछ कहिए।

तब उसने उत्तर दिया :

तुम्हारे वस्त्र तुम्हारे सौन्दर्य्य का अधिक भाग छिपा लेते हैं, लेकिन तुम्हारी कुरूपता को नहीं छिपा पाते।

यद्यपि तुम वस्त्रों में अपने निजीपन की रक्षा करने की आजादी खोजते हो, लेकिन तुम पाते हो बेकार का बोझ और व्यर्थ का बंधन।

अच्छा तो यह है कि तुम बजाय अपने वस्त्रों के अपनी त्वचा से धूप और वायु का आलिंगन करो।

कारण, कि जीवन के प्राण सूर्य में और जीवन के हाथ पवन में हैं।

तुम में से कुछ लोग कहा करते हैं, "वह तो उत्तर दिशा की वायु है जो उन वस्त्रों को बुनती है जिन्हे हम पहनते हैं।"

और मैं भी स्वीकार करता हूँ कि हाँ, यह उत्तर

दिशा की वायु ही है ।

लेकिन उसका करघा है लज्जा और स्नायुओं की कोमलता उसका ताना-बाना ।

और जब उसका कार्य समाप्त हो गया, वह जंगल में खिल-खिलाकर हँस पड़ी ।

याद रक्खो कि लज्जा तो मलिन प्राणियों की दृष्टि से बचने के लिए ढाल-रूप है ।

और जब कोई मलिन प्राणी ही न होगा तब यह लज्जा तुम्हारे जीवन की बेड़ी और मन का विकार न बन जायगी ।

साथ ही, इसे न भूलो कि धरती-माता को तुम्हारी नगी पग-तलियों को चूमने में ख़ुशी मिलती है और पवन तुम्हारे केशों से अठखेलियाँ करना चाहता है ।

: ११ :

क्रय-विक्रय

तब एक व्यापारी बोला :

अब क्रय-विक्रय के संबंध मे अपना मन्तव्य सुनाइए।

इस पर उसने कहा :

पृथ्वी तुम्हारे वास्ते अन्न उपजाती है। यदि तुम अपनी अंजलि भरना जान लो, तो तुम्हे कमी किस बात की रहे !

पृथ्वी-प्रदत्त उपहारो के आदान-प्रदान में तुम इतना अधिक पा सकते हो कि तुम पूर्ण संतुष्ट रह सको।

लेकिन यदि यह विनिमय प्रेम और दयापूर्ण न्याय से भरा हुआ न होगा तो यह कुछ लोगो को लालची बनाएगा और कुछ को भूखो मारेगा।

तुम में से जो समुद्र, खेत और द्राक्ष-कुंजो में मेहनत करनेवाले हैं, वे जब बाजार में जुलाहों, कुम्हारों और पन्सारियों से मिलें, तब—

अपने बीच पृथ्वी के अध्यक्ष देवता का आह्वान करें और उससे प्रार्थना करें कि वह तुम्हें बाँट, तराजू और माप-तोल में शुद्धता और ईमानदारी दे।

और अपने व्यापार-विनिमय में उन लोगों को फटकने ही न दो, जो खाली हाथ आते हैं और अपने शब्दों से ही तुम्हारे श्रम को खरीदना चाहते हैं।

ऐसे लोगों से कह दो, "चलो, हमारे साथ खेतों पर मेहनत करो, या हमारे भाइयों के साथ समुद्र में जाल डालो।

"कारण, पृथ्वी और समुद्र जितने हमारे प्रति उदार हैं, उतने ही तुम्हारे प्रति भी।"

और यदि वहाँ गाने वाले, नाचने वाले और बन्सी बजाने वाले आवें तो उनके उपहारों को भी खरीदो।

कारण, वे भी फल-फूल और धूप[1] के ग्राहक हैं और भले ही उनके लाए हुए उपहार स्वप्न के तारों से बनाए गए हैं, फिर भी वे तुम्हारे मन के वस्त्र और आत्मा के भोग हैं।

और हाट से बाहर आने के पहले तुम्हें चाहिए कि यह तलाश करो कि कोई खाली हाथ तो वापस

१. जलाने की सुगन्धि

नहीं जा रहा।

कारण, जबतक तुम में से छोटे-से-छोटे जीवधारी की भी माँग पूरी नहीं हो जाती, तबतक पृथ्वी के अध्यक्ष देवता पवन की शैया पर चैन की नींद नहीं सो सकते।

: १२ :

अपराध और दण्ड

इसके बाद नगर का एक न्यायाधीश सामने आया और बोला :

अब हमें अपराध और दण्ड के विषय में बताइए।

इसपर उसने कहा :

जब तुम्हारी आत्मा[1] पवन पर सवार होकर घूमने निकल जाती है और जब तुम अकेले और अरक्षित रह जाते हो, तभी तुम दूसरों का, फलतः अपना ही नुकसान करते हो।

और अपने अपराध के कारण तुम्हें प्रभु के द्वार खटखटाने पड़ेंगे, और जबतक द्वार न खुलें तबतक तुम्हें दरवाजे पर बैठे प्रतीक्षा करनी होगी।

तुम में जो दैवी-भाव[2] है, वह सागर के समान है।
वह कभी अशुद्ध होता ही नहीं है।
और आकाश की भाँति केवल उन्हें ऊपर उठाता

1. यहाँ पर विवेक-बुद्धि के अर्थ में। 2 सात्त्विक अंश, कल्याणकारी प्रवृत्ति।

हैं जो पंखवाले हैं।

और तुम्हारा दैवी-भाव सूर्य के समान भी है:

वह न तो छछूँदर[1] की चाल ही जानता है, और न वह साँप के बिल ही खोजता फिरता है।

किन्तु तुम मे केवल एकमात्र दैवी-भाव ही तो नहीं है। तुम में बहुत-सा मानव-भाव भी है और बहुत-सा ऐसा भी है जो मानव भी नहीं, बल्कि आकृतिहीन बौना[2] है जो अन्धकार में ऊंघता हुआ अपनी ही जाग्रति को खोजता हुआ भटक रहा है।

और अब तुम में जो मानव-भाव है, उसके विषय में मै कहता हूँ।

कारण, केवल इसी का अपराध और अपराध के दण्ड से परिचय है, न कि तुम्हारे दैवी-भाव या अंधकार में भटकने वाले बौने का।

मैंने तुम्हें प्रायः किसी अपराधी की आलोचना करते सुना है, मानो वह तुम्हीं में से एक नहीं है, बल्कि तुम्हारे संसार में बिना बुलाये बरबस घुस आनेवाला कोई अजनबी है।

किन्तु मेरा कथन है कि कोई पवित्रतम और धर्मात्मा व्यक्ति भी तुम में से हरेक व्यक्ति के अन्तर में निवास

१. वक्रता और धोखे-बाजी नहीं जानता। २. नीच प्रवृत्ति

फ़रियादी के हृदय के भीतर भी झाँक कर देख लो।

और यदि तुम न्याय की दुहाई देकर दण्ड सुनाना चाहते हो और पाप के वृक्ष पर कुल्हाड़ी चलाना चाहते हो तो उसकी जड़ों में भी नजर डाल कर देख लो।

वास्तव में, तभी तुम देख सकोगे कि भले और बुरे, फलवान और फलहीन दोनों ही की जड़ें पृथ्वी के प्रशांत हृदय में परस्पर गुँथी हुई हैं।

हे न्यायी न्यायाधीशो!

तुम उसे क्या सजा दोगे जो सूरत-शकल में तो ईमानदार है, लेकिन मन में चोर है?

और तुम उस व्यक्ति को क्या दण्ड दोगे जिसने कि शरीर की हत्या तो की है, लेकिन उसकी आत्मा का हनन् पहले ही हो चुका था?

और उस व्यक्ति पर किस तरह का आरोप चलाओगे जो क्रिया में तो ठग और अत्याचारी है, लेकिन स्वयं भी ठगी और अत्याचार का शिकार हो चुका है?

और बताओ उन्हें तुम कैसे सजा दोगे जिनका पश्चाताप उनके अपराधों से अधिक गहरा है?

और क्या यह पश्चाताप ही उसी कानून का दिया हुआ न्याय नहीं है, जिसका पालन करने का प्रयास तुम भी करते रहते हो?

फिर भी न तो तुम निर्दोष को आत्म-वेदना की आग

में झाँक सकते हो और न किसी अपराधी के हृदय में से उसे निकाल सकते हो।

पश्चाताप तो रात्रि-काल में बिना सूचना दिए आ पहुँचता है, जिससे लोग जागे और आत्म-निर्णय करें।

और तुम जो न्याय की साधना करना चाहते हो वह कैसे कर सकोगे, यदि तुम सब कार्यों को पूर्ण प्रकाश में न देखोगे?

और जब तुम प्रत्येक कार्य को पूर्ण प्रकाश में देखोगे तभी तुम जान सकोगे कि जो तन कर खड़े हुए हैं और जो नीचे खड़े हुए हैं, वे दोनों ही, नीच-भाव की रात्रि और दैवी भावना के दिन के बीच की संध्या में रहने वाला एक ही मानव-भाव है।

और मन्दिर के शिखर के पाषाण उसकी नींव में गड़े हुए पत्थरों से ऊंचे नहीं है।

ही उनके कानून हैं।

और सूर्य भी उनके लिए एक छायाएँ गिराने वाले के सिवाय कुछ नहीं है।

लेकिन ज्ञान की आँखों में कानून का अर्थ मानव का नीचे उतर कर अपनी छायाओं को नापने के सिवाय और क्या है?

लेकिन जो सूर्य की ओर मुँह करके चलने वाले हैं क्या उन्हें पृथ्वी पर खिंची हुई छायाएँ पकड़ने का साहस करेंगी।

और जो पवन पर चढ़ कर यात्रा करते हैं, क्या वे पवन-चर्खियों[1] से रास्ता पूछेंगे?

मनुष्य-निर्मित बंदीगृह के दरवाजे बचाकर यदि तुम अपना जुआ तोड़ फेंको तो तुम्हें मनुष्य का कौनसा कानून बाँधने आवेगा?

और मानव द्वारा घड़ी हुई जंजीरों में उलझे बिना तुम नाचो तो तुम्हें किस कानून का डर है?

और यदि तुम अपने कपड़े फाड़ फेंको, लेकिन उन्हें किसी के मार्ग में न डालो, तो ऐसा कौन है जो तुम्हें न्याय की कुर्सी के सामने खड़ा करेगा?

हे आरफालीज-निवासियो, तुम ढोल का मुँह बन्द कर सकते हो, वीणा के तार ढीले कर सकते हो, लेकिन हारिल पक्षी को गाने से कौन रोक सकता है?

१. हवा का रुख बतानेवाली चर्खियाँ

: १४ :

स्वतंत्रता

तब एक व्याख्यानदाता बोला :

अब हमें स्वतंत्रता के संबंध में ज्ञान दीजिए।

उसने उत्तर दिया :

मैंने तुम्हें नगर-द्वार पर और अलावों[1] पर, अपनी स्वतंत्रता के आगे सर झुकाते और उसकी पूजा करते[2] देखा है,

जैसे कि गुलाम भी अपने अत्याचारी मालिक के पैर पकड़ता और उसकी स्तुति करता है, यद्यपि वह उन्हें मार डालने से बाज नहीं आता।

इतना ही नहीं, मैंने मन्दिरों के मण्डपों और सभाओं के पण्डालों की छाया में तुममें से अधिक-से-अधिक आज़ाद आदमी को भी अपनी स्वतंत्रता जुआ बनाए लादे और हथकडी बनाए पहने देखा है।

१. देहातों में लोग जाड़ों में आग जलाकर उसके चारों ओर बैठकर बातें किया करते हैं।

२. चर्चाओं में स्वतंत्रता के प्रति श्रद्धा प्रकट करते।

और यदि तुम कोई अन्याय-पूर्ण कानून को रद कराना चाहते हो, तो याद रक्खो, वह कानून कभी तुमने अपने ही हाथों से अपने ही ललाट पर लिखा था।

और यदि तुम किसी ज़ालिम को सिंहासन से उतारना चाहते हो तो पहले यह देख लो कि तुम्हारे दिल में जो उसका सिंहासन स्थित है वह भी नष्ट हो चुका है या नहीं।

कारण, यदि स्वतंत्र या स्वाभिमानी की स्वतंत्रता में अत्याचार और स्वाभिमान में बेशर्मी का अंश नहीं है तो उस पर कोई अत्याचारी शासन कर ही कैसे सकता है ?

और यदि तुम किसी चिन्ता से मुक्ति चाहते हो तो याद रक्खो कि उसे तुमने स्वयं बुलाकर गले लगाया है। किसी ने जबर्दस्ती उसे तुम्हारे ऊपर बाहर से नहीं लादा।

और यदि तुम किसी भय को भगाना चाहते हो तो याद रक्खो कि उसका निवास-स्थान स्वयं तुम्हारे हृदय में है, न कि उसके हाथ में जो तुम्हे भयभीत करता है।

यथार्थ में, जिन चीजो को तुम चाहते हो और जिन से तुम डरते हो, जिनसे तुम घृणा करते हो और जिन-की अभिलाषा करते हो; जिनके पीछे तुम दौड़ रहे हो और जिनसे तुम छुटकारा चाहते हो, वे एक-दूसरे से सटकर तुम्हारे ही अन्दर मौजूद रहती हैं।

और वे सभी वस्तुएँ, धूप और छाया की तरह, एक-दूसरे के गलबाँही डाले, तुम्हारे अंतराल में घूमती रहती हैं।

और जब छाया मंद पड़ती और मिट जाती है तो उसके स्थान पर, वह प्रकाश जो पिछड़ जाता है, दूसरे प्रकाश के लिए छाया बन जाता है।

इसी तरह तुम्हारी स्वतंत्रता जब अपनी बेड़ियाँ तोड़ देती है, तब वही उच्चतर मुक्ति के सामने बंधन-रूप जान पड़ती है।

: १५ :

बुद्धि और वासना

इसके बाद सती ने फिर कहा :

अब बुद्धि और वासना के विषय में हमें ज्ञान दीजिए।

उसने कहा :

अनेक बार तुम्हारा अन्तर्प्रदेश संग्राम-भूमि बन जाता है, जिस पर तुम्हारी बुद्धि एवं विवेक का तुम्हारी वासना एवं तृष्णा के विरुद्ध, युद्ध होता है।

ऐसे समय, यदि मैं तुम्हारे अंतस्तल में शांति का दूत बन कर पहुँच सकूँ, तुम्हारे आंतरिक तत्वों की पारस्परिक विषमता और वैमनस्य को एकता और समता में बदल सकूँ तो कितना अच्छा हो!

किन्तु, मैं अकेला कर ही क्या सकूँगा, यदि तुम स्वयं भी शांति स्थापित कराने वाले, नहीं-नहीं, अपने प्राकृतिक तत्वों के प्रेमी नहीं बनोगे?

तुम्हारी बुद्धि और तुम्हारी वासना, संसार-समुद्र

में पड़ी जीवन-नैया की पाल और पतवार हैं।

दुर्भाग्यवश यदि तुम्हारी पाल या पतवार नष्ट हो जाय तो तुम्हें अपनी नौका को या तो लहरों की मर्जी पर लक्ष्यहीन बहने देना होगा या बीच समुद्र में कहीं टिके रहना।

कारण, बुद्धि एकच्छत्र शासन पाने पर एक ही स्थान पर रोक रखने वाली शक्ति होती है और अंकुश-हीन वासना तो वह ज्वाला है जो स्वयं अपना ही विनाश न हो जाय, तबतक जलती रहती है।

अतएव तुम अपनी आत्मा को मौका दो कि वह तुम्हारी बुद्धि को वासना की ऊँचाई तक उठावे ताकि वह गा सके।

और उसे तुम्हारी वासना को बुद्धि के प्रकाश में चलाने दो ताकि तुम्हारी वासना नित्य ही अपने विनाश में से नया जन्म पा सके, जैसे अनल-पक्षी[1] भस्म होकर पुनः जीवित हो जाता है।

मैं कहता हूँ कि तुम अपने विवेक और अपनी तृष्णा का सत्कार अपने घर आए हुए दो अतिथियों के

[1] ग्रीस में किंवदन्ती है कि फिनिक्स पक्षी मृत्यु समीप आने पर अग्नि में गिरकर जल जाता है और कुछ क्षण बाद उसकी राख में से वैसा-का-वैसा पक्षी निकलकर आकाश में उड़ने लगता है।

समान करो।

निश्चय ही, एक अतिथि का दूसरे अतिथि से बढ़-कर सत्कार तुम नहीं करोगे। कारण, जो एक पर अधिक देता है, वह दोनो के प्रेम और विश्वास से हाथ धो बैठता है।

जब तुम किसी पहाड़ी पर नीम की शीतल छाया मे बैठकर शान्त, स्वच्छ, शस्य-श्यामल, दूर-दूर तक खेतो और मैदानों का आनन्द लूट रहे हो, तब उस प्रशांत वातावरण में तुम्हारे हृदय में गूंजे, "ईश्वर का निवास बुद्धि में है।"

और जब तूफान उठ रहा हो, जोरों की हवा वृक्षों को झकझोर रही हो, विजली और बादलों की कड़क आकाश की भयानकता प्रदर्शित कर रही हो तब तुम्हारा हृदय भय के साथ कहे, "ईश्वर वासना में विचरण करता है।"

और चूंकि तुम भी प्रभु के लोक की एक सांस हो, ईश्वर के जगल के एक पत्ते हो, इसलिए तुम भी विवेक में बसते और वासना में विचरण करते हो।

: १६ :

दुःख

तब एक स्त्री बोली :

अब दुःख के सम्बन्ध में कुछ कहिए।

इस पर उसने कहा :

दुःख तो उस छिलके का तोड़ा जाना है, जिसने तुम्हारे ज्ञान के फल को छिपा रक्खा है।

जिस तरह फल के ऊपर के कठोर छिलके को टूटना पड़ता है, जिससे कि उसके हृदय को भी सूर्य का प्रकाश मिल सके, उसी तरह तुम्हारा भी दुःख से परिचय होना आवश्यक है।

यदि तुम अपने रोज के चमत्कारों को कौतूहल से देखने की हृदय को आँखें दे सको तो तुम जान पाओगे कि तुम्हारा दुःख तुम्हारे सुख की अपेक्षा कम आश्चर्य-पूर्ण नहीं है।

तब तुम अपने जीवन की ऋतुओं[1] का उसी तरह

१. परिवर्तन

स्वागत करोगे जिस तरह तुम उन ऋतुओं का स्वागत करते हो जो तुम्हारे खेतों में आती-जाती हैं। और तभी तुम शान्तिपूर्वक अपने दुःखरूपी शिशिर का निरीक्षण कर सकोगे।

तुम्हारा अधिकांश दुःख स्वयं तुम्हारी अपनी सृष्टि है।

दुःख एक कड़वी औषधि है, जिससे तुम्हारा अंतर्वासी चिकित्सक तुम्हारी रोगी आत्मा को स्वस्थ करता है।

इसलिए अपने चिकित्सक पर विश्वास करो और उसकी दी हुई औषधि को चुपचाप शान्ति से पीलो;

क्योंकि उसके हाथ यद्यपि कठोर और भारी हैं, फिर भी उनके संचालक तो अदृश्य के कोमल हाथ हैं।

और औषधि की प्याली यद्यपि तुम्हारे होठों को जलाती है, फिर भी वह मिट्टी से बनी है, जिसे कुम्हार ने पवित्र आंसुओं से सींचा है।

: १७ :

आत्म-ज्ञान

तब एक आदमी बोला :

अब हमें आत्मज्ञान के विषय में कहिए।

उसने कहा :

तुम्हारा हृदय तो अव्यक्त रूप से दिवस और रात्रि के रहस्यों से परिचित ही है।

फिर भी तुम्हारे कानों को आत्म-ज्ञान के शब्द सुनने की प्यास जान पडती है।

जो तुम अनुभूति में सदा से जानते रहे, उसे तुम शब्दों में जानना चाहते हो।

तुम अपने स्वप्नों के नग्न शरीर को अंगुलियों से छूना चाहते हो।

ऐसी इच्छा करना उचित ही है।

तुम्हारी आत्मा की अनन्त सलिला को बाहर फूट कर समुद्र की ओर कल-कल करते हुए बहना ही चाहिए।

तभी तुम अपने अनन्तगर्भ का कोष अपने नेत्रों के आगे देख सकोगे।

परन्तु अपने इस अज्ञात खजाने को तोलने के लिए तराजू न उठाना।

और किसी बाँस या डोरी से अपने ज्ञान की गहराई नापने का प्रयत्न न करना;

क्योंकि आत्मा तो अगाध और असीम समुद्र है।

"मुझे सत्य मिल गया।" ऐसी गर्व भरी बोली न बोलो, बल्कि कहो "मुझे एक सत्य की प्राप्ति हुई है।"

"मैंने आत्मा का मार्ग पा लिया।" ऐसा मत कहो, बल्कि कहो, "मैंने अपने मार्ग पर चलते हुए आत्मा के दर्शन किए हैं।"

आत्मा सदा एक ही मार्ग पर नहीं चलती, न वह नरकुल की तरह उगती है;

बल्कि वह असंख्य पंखुड़ियों वाले शतदल के सदृश अपने आपको विकसित करती है।

: १८ :

शिक्षा

इसके बाद एक अध्यापक ने कहा :

शिक्षा के विषय में हमें ज्ञान दीजिए।

वह बोला :

तुम्हारे ज्ञान के सूर्योदय में अर्धनिद्रित अवस्था में जो कुछ पहले से ही मौजूद है उससे अधिक कोई क्या बतावे ?

जो शिक्षक मन्दिर की छाया में अपने विद्यार्थियों के बीच घूमता है, वह उन्हें अपने ज्ञान का अंश ही नहीं, बल्कि अपना प्रेम और विश्वास भी सौंपता है।

यदि वह, वास्तव में, बुद्धिमान है तो वह तुम्हें अपने ज्ञान-मंदिर में घुसने की आज्ञा कभी न देगा, बल्कि वह तुम्हें तुम्हारी बुद्धि के प्रवेश-द्वार तक पहुँचाने का प्रयत्न करेगा।

ज्योतिषी तुम्हें आकाश के सम्बन्ध में अपना ज्ञान कह सकता है, किन्तु वह अपना ज्ञान तुम्हें प्रदान नहीं कर सकता।

और गायक तुम्हे दिशा-दिशा में व्याप्त स्वरैक्य गाकर सुना सकता है, परन्तु उस स्वर को पकड़ने वाले कान नहीं दे सकता और न उनको प्रतिध्वनित करने वाली आवाज दे सकता है।

और निपुण गणित-शास्त्री तोल और माप के लोक की बातें कह सकता है, लेकिन वह तुम्हें वहाँ तक ले नहीं जा सकता।

कारण, एक मनुष्य की कल्पना का देखा हुआ दृश्य दूसरे व्यक्ति को पंख नहीं लगा सकता।

और जिस प्रकार ईश्वर की आँखों में भी तुम में से प्रत्येक का अलग-अलग स्थान है, उसी प्रकार तुम्हें भी अपने ईश्वरीय और लौकिक ज्ञान में स्वतन्त्र और अकेला रहना चाहिए।

सारे विचार, सारी कामनायें, और सारी आशायें अव्यक्त आनन्द के साथ पैदा होती और उपभोग मे आती है।

जब तुम अपने मित्र से विदा लो तो शोक मत करो।

कारण, तुम उसमें जिस वस्तु को सबसे अधिक प्यार करते हो, वही उसकी अनुपस्थिति में अधिक स्पष्ट हो जाती है, जैसे एक पर्वतारोही को नीचे मैदान से पर्वत अधिक स्पष्ट और सुन्दर दिखाई देता है।

आत्मिक संबन्ध को गहरा बनाते रहने के सिवाय तुम्हारी मित्रता कोई और प्रयोजन न रक्खे।

कारण, जो प्रेम अपने ही रहस्य का घूंघट खोलने के अतिरिक्त कुछ और खोजता है, वह प्रेम नहीं, एक जाल है, जिसमें निकम्मी वस्तु के सिवाय और कुछ नही फँसता ।

तुम अपनी प्रिय-से-प्रिय वस्तु अपने मित्र के लिए रख छोड़ो।

✓ जिसने तुम्हारे जीवन समुद्र का भाटा[1] देखा है उसे उसका ज्वार[2] भी देखने दो।

१. उतार यानी मुसीबत में साथ दिया है।

२. चढाव यानी उन्नति के दिनों में भी उसे साथ रक्खो।

: २० :

वार्तालाप

तब एक विद्वान ने कहा :

अब हमें वार्तालाप के विषय में कुछ बताइए ।

इस पर उसने कहा :

जब तुम अपने विचारों में शान्ति नहीं पाते, तभी तुम बातचीत शुरू करते हो ।

जब तुम अपने हृदय के एकान्त में रहने से ऊब जाते हो, तब तुम अपने ओठों पर वास करते हो, कारण, वाणी दिल बहलाव और समय काटने का साधन है ।

और तुम्हारी अधिकांश चर्चाओं में बेचारे विचार का कचूमर निकाल दिया जाता है ।

कारण विचार तो आकाश का पक्षी है, जो शब्दों के पींजरे में अपने पंख भले ही फडफडा ले लेकिन वहाँ वह उड नहीं सकता ।

तुम में से ऐसे अनेक हैं जो अकेलेपन से ऊब कर किसी बातूनी की खोज करते हैं ।

कारण, एकांत की नीरवता उनकी आंखों के सामने उनका नंगा रूप खोल कर रख देती है और वे उससे भागना चाहते हैं।'

और कुछ ऐसे भी हैं जो बिना पहले से कुछ जाने-बूझे बातों में ऐसे सत्य की झलक दे जाते हैं जिसे वे स्वयं नहीं जानते।

ऐसे ही लोगों की संगीतमय नीरवता में आत्मा का निवास है।

जब कभी तुम्हें अपने मित्र से सड़क पर या हाट-बाजार में अनायास मिलने का संयोग मिले, उस समय तुम्हारी आत्मा तुम्हारे ओठों को गति दे और तुम्हारी जिह्वा का संचालन करे।

इस प्रकार तुम्हारी वाणी की वाणी उसके कानों के कान में प्रवेश करे।

क्योंकि उसकी आत्मा तुम्हारे हृदय के सत्य को वैसी तरह सुरक्षित कर रखेगी जिस तरह मदिरा का स्वाद स्मरण रहता है जबकि उसका रंग याद न रहा हो और प्याला भी नष्ट हो चुका हो।

१. [illegible]

: २१ :

समय

तब एक ज्योतिपवेत्ता ने कहा :

गुरुदेव, अब समय के सम्बन्ध में समझाइए ।

उसने उत्तर दिया :

तुम अनंत और असीम समय की माप करना चाहते हो ।

तुम समय और ऋतुओ के अनुसार अपना व्यवहार और अपने जीवन को बनाना चाहते हो ।

समय को एक स्रोत बनाना चाहते हो और उसके किनारे पर बैठकर तुम उसके प्रवाह का अवलोकन करना चाहते हो ।

लेकिन तुम्हारे अंदर जो कालातीत[1] है वह तुम्हारे जीवन की कालातीतता से परिचित है ।

वह अच्छी तरह जानता है कि गत दिवस आज की

१. समय की सीमा के पार रहने वाला, परमेश्वर ।

स्मृति है और आगामी कल आज का स्वप्न।

और जो तुम्हारे हृदय में गान कर रहा है और ध्यान लगाता है, वह आज भी उसी आदि क्षण में निवास कर रहा है, जिसमें उसने आकाश में नक्षत्रों को छितराया था।

तुममें से कौन यह नहीं जानता कि उसकी प्रेम करने की शक्ति असीम है?

और कौन नहीं जानता कि प्रत्येक प्रेम यद्यपि अनन्त है फिर भी वह अपने ही अस्तित्व की परिधि से घिरा हुआ है, और वह एक प्रेम-भावना से दूसरी प्रेम-भावना, एक प्रेम-व्यवहार से दूसरे प्रेम-व्यवहार की ओर अग्रसर नहीं हो रहा?

और क्या प्रेम की भांति समय भी अविभाज्य और अचल नहीं है?

लेकिन यदि तुम्हारी इच्छा समय का माप करना ही चाहती है, तो ऐसा करो कि प्रत्येक ऋतु को अन्य ऋतुओं की परिधि बना दो।

और वर्तमान को अतीत की स्मृति को गले लगाने और भविष्य का आलिंगन करने प्रेम-पूर्वक बढ़ने दो।

: २२ :

भलाई-बुराई

तब नगर के एक बुजुर्ग ने कहा :

भलाई और बुराई के विषय में कुछ कहिए :

इस पर वह बोला :

तुम में जो भलाई है उसके विषय में मैं कह सकता हूँ, बुराई के विषय में नहीं।

और बुराई है क्या—अपनी ही ज्वाला से झुलसी हुई भलाई।

जब भलाई को भूख लगती है तब वह अंधेरी गुफाओं में भी अपनी खुराक खोजती है, और जब उसे प्यास लगती है तो सडा पानी भी पी जाती है।

जब तुम स्व-रूप के साथ एक-रूप होते हो तब तुम भले हो

लेकिन जब तुम स्व-रूप के साथ एक-रूप नहीं होते तब बुरे नहीं होते।

कारण जो घर बाराबाट है वह चोरों की माँद नहीं कहा जा सकता—वह फिर भी फूट से विभाजित घर

स्मृति है और आगामी कल आज का स्वप्न।

और जो तुम्हारे हृदय में गान कर रहा है और ध्यान लगाता है, वह आज भी उसी आदि क्षण में निवास कर रहा है, जिसमें उसने आकाश में नक्षत्रों को छितराया था।

तुममें से कौन यह नहीं जानता कि उसकी प्रेम करने की शक्ति असीम है?

और कौन नहीं जानता कि प्रत्येक प्रेम यद्यपि अनन्त है फिर भी वह अपने ही अस्तित्व की परिधि से घिरा हुआ है, और वह एक प्रेम-भावना से दूसरी प्रेम-भावना, एक प्रेम-व्यवहार से दूसरे प्रेम-व्यवहार की ओर अग्रसर नहीं हो रहा?

और क्या प्रेम की भांति समय भी अविभाज्य और अचल नहीं है?

लेकिन यदि तुम्हारी इच्छा समय का माप करना ही चाहती है, तो ऐसा करो कि प्रत्येक ऋतु को अन्य ऋतुओं की परिधि बना दो।

और वर्तमान को अतीत की स्मृति को गले लगाने और भविष्य का आलिंगन करने प्रेम-पूर्वक बढ़ने दो।

ही है।

ऐसा भी हो सकता है कि एक बेपतवार नौका खतरनाक द्वीपों में लक्ष्यहीन मारी मारी घूमे, लेकिन डूबकर तली में न पहुंचे।

जब तुम अपने आप का दान करने के लिए कठिन श्रम करते हो, तब तुम भले हो।

लेकिन यदि तुम लाभ के लिए श्रम करते हो तब भी तुम बुरे नहीं समझे जा सकते।

कारण, जब तुम लाभ के लिए श्रम करते हो तब तुम केवल एक जड़ हो, जो पृथ्वी से लिपट कर उसका स्तन-पान करती है।

निश्चय ही, फल जड़ से नहीं कह सकते, "तुम भी मेरे समान बनो—परिपक्व, सरस और दूसरों को अपना सबकुछ दे देने को प्रस्तुत।"

क्योंकि फल का धर्म है देना और जड का लेना।

तुम भले हो जब तुम अपने वार्तालाप में सजग हो।

लेकिन जब तुम्हारी ज़बान अनर्गल प्रलाप करती है और तुम निद्रा में लीन होते हो तब भी तुम बुरे नहीं होते।

अनर्गल प्रलाप भी दुर्बल जिह्वा को सबल बना सकता है।

तुम भले हो जब तुम अपने लक्ष्य की ओर दृढ़ता और साहस-पूर्वक पैर बढ़ाते हो।

फिर भी यदि तुम लँगड़ाते हुए जाते हो तो तुम्हें बुरा नहीं कहा जा सकता।

लेकिन तुममें से जो मजबूत और फुर्तीले हैं, वे किसी लँगडे के सामने, न लँगडाने लगे, मानो उससे सहानुभूति दिखाते हों।

तुम अनगिनित तरीको से भले हो, लेकिन यदि तुम भले नहीं हो, तो बुरे भी नहीं हो।

सिर्फ आलसी और अवारा हो जाते हो।

हरिण कछुए को अपनी फुर्ती नहीं सिखा सकता।

विराट स्व-रूप की प्राप्ति की आकांक्षा में तुम्हारी भलाई निहित है और ऐसी आकांक्षा प्राणी-मात्र में है।

लेकिन तम मे से किसी-किसी मे यह आकांक्षा समुद्र की ओर जोर-शोर से प्रवाहित होने वाले पूर के समान है जो अपने साथ पर्वत-प्रदेश के गुप्त संदेश और वन-उपवन के मधुर संगीत को बहाए लिये चला जाता है।

और किसी-किसी मे यह आकांक्षा एक उथली सरिता के समान है जो समुद्र-तट पर पहुँचने के पहले बल-खाती, घूमती-फिरती, मंथर गति से बिलमती जाती है।

लेकिन जिस व्यक्ति की आकांक्षाएँ अधिक हैं, वह अल्प आकांक्षा वाले से न कहे, "तुम सुस्त और आराम-

तलब हो।"

क्योंकि कोई भलामानस नंगे से नहीं पूछता, "तुम्हारे कपड़े कहां हैं?" न किसी बेघरबार से पूछता है, "तुम्हारा घर क्या हुआ?"

: २३ :

प्रार्थना

तब एक साध्वी ने कहा :

अब प्रार्थना के सम्बन्ध में कुछ प्रकाश डालिए।

उसने उत्तर दिया :

तुम अपने दुःख और अभाव के दिनों में प्रार्थना किया करते हो; लेकिन यदि तुम अपने उल्लास की पूर्णता और समृद्धि के दिनों में भी प्रार्थना करो तो कितना अच्छा हो !

और प्रार्थना है क्या—केवल स्व-रूप की चिदाकाश में व्यापकता।

यदि अपने अंधकार को आकाश मे फैलाने से तुम्हे सात्वना मिलती है तो अपने हृदय की ऊषा को भी फैलाने से तुम्हे असीम उल्लास मिलेगा।

और जिस समय तुम्हारी आत्मा तुम्हें प्रार्थना करने के लिए पुकारे उस समय यदि तुम्हें रोए विना न रहा जाय तो जबकि तुम हंसते बाहर न आओ तबतक

: २६ :

मौज

तब एक वैरागी, जो वर्ष में केवल एक बार नगर में आता था, आगे आया और बोला :

अब मौज के विषय में कुछ कहिए।

इस पर उसने उत्तर दिया :

मौज स्वतंत्रता का गीत है,
लेकिन यह स्वतंत्रता नहीं है।
यह तुम्हारी कामनाओं का फूल है,
लेकिन उनका फल नहीं है।
यह वह गहराई है जो ऊँचे चढ़ने की आज्ञा देती है,
लेकिन यह स्वयं न गहरी है, न ऊँची।

यह पिंजरे के पक्षी की उड़ान है,
लेकिन यह सीमाबद्ध प्रदेश नहीं है।
हाँ, वास्तव में, मौज स्वतंत्रता का संगीत है!

और, मैं चाहता हूँ कि तुम जी खोलकर इसे गाओ, लेकिन यह नहीं चाहता कि इसी में अपने-अपने हृदय

किसे पता जो वस्तु आज छूट रही है, वही काम के लिए तुम्हारी बाट जोह रही हो।

तुम्हारा शरीर भी अपने पूर्व संस्कारों और उचित आवश्यकताओं से अवगत है और वह धोखे में नहीं आ सकता।

और तुम्हारा शरीर तुम्हारी आत्मा का सितार है।

और यह तुम्हारे हाथ की बात है कि तुम उससे मधुर स्वर झंकृत करो या बेसुरी आवाजें निकालो।

अब जरा अपने दिल पर हाथ रख कर पूछो, "मौज में क्या तो अच्छा है और क्या अच्छा नहीं है, इसका भेद हम कैसे करेंगे?"

अपने खेतों और बगीचों में जाओ, तुम जानोगे कि मधु-मक्खी का सुख फूलों से मधु संचय करना है।

लेकिन फूलों का भी सुख यह है कि वे मधु-मक्खियों को मधु-दान करें।

कारण, मधु-मक्खी के लिए पुष्प जीवन-स्रोत है।

और फूल के लिए मधु-मक्खी प्रेम की संदेश-वाहिका।

और मधु-मक्खी और फूल दोनों के लिए सुख का देना और लेना आवश्यकता की पूर्ति है।

हे आरफालीज निवासियों, मौज-मजे के विषय में तुम फूल और मधु-मक्खी के समान बनो।

: २५ :

सुन्दरता

तब एक कवि ने कहा :

अब सुन्दरता के सम्बन्ध में कुछ कहिए।

इस पर उसने कहा :

तुम सुन्दरता को कहाँ खोजोगे, और तुम उसे कैसे पा सकोगे जबतक वह स्वयं ही तुम्हारा मार्ग और तुम्हारी पथ-प्रदर्शिका न बने ?

और तुम उसका वर्णन कैसे कर सकोगे, यदि वह स्वयं ही तुम्हारी वाणी को बुनने वाली न बने ?

दलितों और पीड़ितों का कथन है, "सुन्दरता दयालु और मृदुल है।

"अपने गौरव पर आधी-आधी लजाती वह हमारे बीच में आती है।

और कामी कहता है, "नहीं, सुन्दरता तो शक्ति और भय की मूर्ति है।

"वह तूफान की तरह हमारे नीचे की पृथ्वी और

हमारे ऊपर के आकाश को हिला डालती है ।"

थके और परेशान कहते हैं, "सुन्दरता तो आहिस्ता-आहिस्ता काना-फूसी करती है । वह हमारी आत्मा में बोलती है ।

"छाया के भय से काँपने वाली ज्योति के समान वह हमारी नीरवता को आत्म समर्पण कर देती है ।"

लेकिन बेचैन कहते हैं, "हमने उसे पर्वतों पर गरजते सुना है ।

"और उस गरज के साथ टापों की आवाज, पंखों की फड़फड़ाहट और सिंहों की दहाड़ हमने सुनी है ।"

रात में नगर के पहरेदार कहते हैं, "ऊषा के साथ सुन्दरता का भी पूर्व दिशा से उदय होगा ।"

और दोपहर के समय मजदूर और राहगीर कहते हैं, "हमने उसे सन्ध्या के झरोखे से पृथ्वी की ओर झाँकते देखा है ।"

शीत-काल में बर्फ से घिरे हुए लोग कहते हैं, "वसंत ऋतु के साथ गिरिशिखरों पर कूदती हुई वह आवेगी । '

और ग्रीष्म-काल की घोर गरमी में खेत काटने वाले कहते हैं, "हमने उसे हेमन्त के पत्तों के साथ नाचते देखा

है, और उसके बालों पर हमने वर्फ के कण बिखरे देखे हैं।"

ये सब बातें तुमने सुन्दरता के विषय में कही हैं;
लेकिन सच पूछो तो यह सुन्दरता का वर्णन नहीं, तुम्हारी अतृप्त आकांक्षाओ का वर्णन है।
लेकिन सुन्दरता आकांक्षा नहीं, परमानन्द है।
न तो यह तृषाकुल कंठ है, न याचना के लिए फैले हुए खाली हाथ।
बल्कि यह तो एक प्रज्ज्वलित हृदय और मंत्र-मुग्ध चित्त है।
न तो यह ऐसी प्रतिमा है जिसे तुम देख सको और न ऐसा गान है जिसे तुम सुन सको,
बल्कि यह एक ऐसी प्रतिमा है जिसे तुम केवल बंद आँखो से देख सकते हो और ऐसा संगीत है जिसे तुम बंद कानो से ही सुन सकते हो।
न तो यह वृक्ष के छाल के नीचे रिसने वाला रस है और न पंजे के साथ जुड़ा हुआ पख ही,
बल्कि यह तो सदा से और सदा को फूली रहने वाली वाटिका है और सदा से उड़ती रहने वाली अप्सराओं का समूह।
आरफालीज निवासियो, सुन्दरता ही जीवन है, जब कि जीवन अपने पवित्र मुख पर से अवगुंठन हटा

देता है।

लेकिन तुम्हीं जीवन हो और तुम्हीं अवगुंठन हो।

सुन्दरता, दर्पण में अपना रूप देखने वाली अमरता है,

लेकिन अमरता भी तुम हो, दर्पण भी तुम्हीं हो।

: २६ :

धर्म

तब एक वृद्ध साधु ने कहा :

अब धर्म के संबंध में हमें ज्ञान दीजिए।

इस पर उसने कहा :

क्या आज मैंने किसी अन्य विषय पर कहा है ?

क्या सकल कर्म और सकल चिंतन धर्म नहीं है ?

और जो न तो कर्म है और न चिंतन, बल्कि हृदय में सदैव, जब हाथ पत्थर गढ़ रहे हों अथवा करघे पर काम कर रहे हों उस समय भी—प्रस्फुटित होने वाला आश्चर्य और चमत्कार है, क्या वह धर्म नहीं है ?

अपने धर्म को कर्म से और श्रद्धा को व्यवसाय से अलग कौन कर सकता है ?

ऐसा कौन है जो अपने समय को विभाजित कर के सामने रखकर कहे, "यह परमात्मा के लिए, यह आत्मा के लिए और शेष यह मेरी काया के लिए है ?"

तुम्हारे सारे ही क्षण, एक आत्मा से दूसरी आत्मा

के पास, आकाश मे उड़ने वाले पंख हैं।

जो नैतिकता को अपना श्रेष्ठतम वस्त्र मान कर पहनता है उसे नंगे फिरना श्रेयस्कर है।

पवन और धूप उसके शरीर मे छेद नहीं करेंगे।

जो अपने व्यवहार को नीति के नियमों में सीमित करता है वह अपने स्वच्छन्द गाते हुए गगन-विहारी पक्षी को पिंजरे में बन्द करता है।

जो स्वतन्त्रतम संगीत है वह सींखचो और बन्धनो मे से नहीं आता।

और जो पूजा को खुलने और फिर बन्द होने वाला द्वार समझता है, उसने अभी अपने हृदय-मंदिर के दर्शन ही नहीं किए हैं जिसके द्वार ऊषा से ऊषा तक[1] खुले रहते हैं।

तुम्हारा दैनिक जीवन ही तुम्हारा मंदिर और तुम्हारा धर्म है।

जब-जब तुम उसमे जाओ अपना सबकुछ उसमे ले जाओ—

हल, कुदाली, हथौड़ा और अपनी बाँसुरी ले जाओ।

वे सब चीजे ले जाओ जिनका निर्माण तुमने अपने उपयोग या मनोरंजन के लिए किया है।

कारण, ध्यान करते समय तुम अपनी प्राप्तियों से

१. आठों पहर।

के पास, आकाश में उड़ने वाले पंख हैं।

जो नैतिकता को अपना श्रेष्ठतम वस्त्र मान कर पहनता है उसे नंगे फिरना श्रेयस्कर है।

पवन और धूप उसके शरीर में छेद नहीं करेंगे।

जो अपने व्यवहार को नीति के नियमों में सीमित करता है वह अपने स्वच्छन्द गाते हुए गगन-विहारी पक्षी को पिंजरे में बन्द करता है।

जो स्वतन्त्रतम संगीत है वह सींकचों और बन्धनों में से नहीं आता।

और जो पूजा को खुलने और फिर बन्द होने वाला द्वार समझता है, उसने अभी अपने हृदय-मंदिर के दर्शन ही नहीं किए हैं जिसके द्वार ऊषा से ऊषा तक[1] खुले रहते हैं।

तुम्हारा दैनिक जीवन ही तुम्हारा मंदिर और तुम्हारा धर्म है।

जब-जब तुम उसमें जाओ अपना सबकुछ उसमें ले जाओ—

हल, कुदाली, हथौड़ा और अपनी बाँसुरी ले जाओ।

वे सब चीजें ले जाओ जिनका निर्माण तुमने अपने उपयोग या मनोरंजन के लिए किया है।

कारण, ध्यान करते समय तुम अपनी प्राप्तियों से

१ आठों पहर।

और जब तुम पर्वत की चोटी पर पहुँच जाओगे, तब तुम्हारा चढ़ना प्रारम्भ होगा।

और जब पृथ्वी तुम्हारे शरीर के सारे अवयवों को अपने में लीन कर लेगी, तभी वास्तव मे तुम नृत्य प्रारम्भ करोगे।

आच्छादित करले, फिर भी मैं तुम्हारी बुद्धि की खोज करूंगा।

और मेरी खोज विफल न होगी।

और जो कुछ मैंने कहा है वह सत्य है तो वह सत्य पुनः प्रकट होगा—स्पष्टतर वाणी और तुम्हारी बुद्धि के अनुकूल शब्दों में।

मैं वायु पर सवार होकर जारहा हूँ, ओ, आरफालीज़ के निवासियो, लेकिन शून्यता में मैं नहीं डूब रहा हूँ।

और आज का दिन अगर तुम्हारी माँग और मेरे प्रेम की तृप्ति नहीं बन सका तो इसे किसी आने वाले दिन का इकरार मानो।

मनुष्य की मांगें बदल जाती हैं, लेकिन उसका प्रेम नहीं बदलता और न प्रेम की मांग पूरी करने की उसकी आकांक्षा बदलती है।

इसलिए विश्वास रक्खो, मैं महामौन से वापिस आऊंगा।

वह कोहरा, जो खेतों में कुछ तुहिन बिंदु छोड़ कर अदृश्य हो जाता है, वह फिर उठेगा, बादलों में घिरेगा और वर्षा में नीचे झरेगा।

और मैं इस कोहरे से भिन्न प्रकार का नहीं हूँ।

रात्रि की निस्तब्धता में मैंने तुम्हारी गलियों में विचरण किया है, और मेरी आत्मा ने तुम्हारे घरों में

प्रवेश किया है।

और मैंने अपने हृदय में तुम्हारे हृदय की धड़कन का अनुभव किया है, तुम्हारे उच्छ्वास मेरे ओठों पर नाचे हैं, और मैंने तुम सभी को पहचाना है।

मैंने तुम्हारे आनन्द और वेदनाओं को जाना है, और तुम्हारी निद्रावस्था में आनेवाले स्वप्न मेरे ही स्वप्न थे।

और प्राय मैं तुम्हारे बीच पहाड़ों से घिरी झील की तरह रहा हूँ।

मैंने अपने अन्दर तुम्हारे शिखर, टेढ़े-मेढ़े उतार-चढ़ाव, बल्कि तुम्हारे विचारों और कामनाओं के बादल भी प्रतिबिम्बित करके तुम्हें दिखाए हैं।

और मेरे मौन में तुम्हारे बच्चों की खुशी की किलकारियाँ झरना बन कर और तुम्हारे नवयुवकों की आकांक्षाएं नदियाँ बन कर आई हैं।

उन झरनों और उन नदियों ने मेरे अन्तस्तल में पहुँच कर भी अपना संगीत बन्द नहीं किया।

यह संगीत उन उल्लासों और उन आकांक्षाओं से भी अधिक मधुर बन कर मेरे पास आया था।

वह तुम में रहने वाला अनन्त था·

वह विराट पुरुष था जिसके तुम लोग एक-एक कोष हो, एक-एक रग हो।

वह महागान जिसके आगे तुम्हारा समस्त संगी‌ नीरव स्पंदन है।

यह तो वह विराट पुरुष है जिसके कारण तुम म‌ विराट हो।

उसकी झाँकी पाने के प्रयत्न मे ही मैंने तुम्हारे दर्श‌ किए हैं और तुम्हे प्यार किया है।

इस विराट ब्रह्माण्ड के बाहर भी क्या कोई ऐस‌ दूर देश है, जहाँ प्रेम पहुँचता हो।

कौनसे स्वप्न, कौनसी आशाएँ हैं और कौनसी धारणाएँ हैं जो उड़ने मे उससे होड़ कर सकें?

विशाल वन-वृक्ष की भाँति फल-फूलो से लदा हुआ वह विराट पुरुष तुम मे स्थित है।

उसकी शक्ति तुम्हे पृथ्वी से जकडे हुए है, उसका सौरभ तुम्हे आकाश मे उड़ाता है और उसकी अनश्वरता तुम्हे मृत्यु-हीन बनाती है।

तुम्हे बताया गया है कि यद्यपि तुम शृंखला हो फिर भी तुम अपनी निर्बलतम कडी से भी निर्बल हो।

यह कथन अर्ध सत्य है। तुम अपनी दृढतम कडी से भी अधिक सुदृढ़ हो।

तुम्हारे तुच्छतम कार्य से तुम्हारी माप करना, समुद्र की महानता की माप उसके फेन की अल्पता से करना है।

तुम्हारी विफलताओं के आधार पर तुम्हारे विषय

में राय बनाना, ऋतुओं को उनकी परिवर्तनशीलता के लिए कोसना है।

हाँ, तुम महासिंधु के समान हो,

और यद्यपि भार से लदे हुए जहाज किनारे पर खड़े हुए तुम में ज्वार उठने की प्रतीक्षा में हैं फिर भी तुम समुद्र की भाँति शीघ्र ही अपने में ज्वार नहीं उठा सकते।

और तुम ऋतुओं के समान भी हो,

यद्यपि तुम अपने शिशिर में अपने वसंत की उपेक्षा करते हो,

फिर भी तुम्हारे अंतर मैं आराम लेने वाला वसन्त नींद की खुमारी में मुस्करा रहा है. और अपमान का अनुभव नहीं करता।

यह सब मैं इसलिए नहीं कर रहा कि बाद में तुम एक-दूसरे से कहो. "उसने हमारी खूब प्रशंसा की और केवल हमारे सद्गुणों का ही बखान किया।"

मै तो केवल उन्हीं शब्दों को दोहरा रहा हूँ जो पहले से ही तुम्हारे विचारों में प्रस्तुत हैं।

और वाङ्मय ज्ञान वाचातीत ज्ञान की छाया के सिवाय है क्या ?

तुम्हारे विचार और मेरी वाणी एक सील लगी हुई स्मृति की तरंगों के सिवाय क्या है,

जिसमें गत दिवसों का सारा इतिहास सुरक्षित है ?

दो, तुम देखोगे कि वहाँ तुम और तुम्हारे बच्चे हाथ में हाथ लिये नृत्य कर रहे हैं।

और कितनी ही बार यह रहस्य जाने बिना ही तुम हर्षोन्मत्त हो जाते हो।

ऐसे अनेक आए हैं जो तुम्हारी श्रद्धा को सुनहली आशायें बँधा कर बदले में तुम से धन, सत्ता और कीर्ति ले गए हैं।

लेकिन मैं तो तुम्हें आशा से भी छोटी वस्तु दे सका हूँ, फिर भी तुम सबने मेरे प्रति अधिक उदारता प्रकट की है।

तुमने तो मुझे जीवन के प्रति उत्कट-पिपासा प्रदान की है।

वास्तव में किसी व्यक्ति को उस वस्तु से बड़ी भेंट और क्या मिल सकती है, जो उसकी सारी आकाँक्षाओं को पिपासित होठ और उसके सारे जीवन को एक अविरल स्रोत बनाने में समर्थ हो।

और इससे बढ़कर मेरा सम्मान और मेरा पुरस्कार क्या हो सकता है कि—

जब कभी मैं स्रोत के समीप अपनी प्यास बुझाने के उद्देश्य से जाता हूँ, तब मैं उनके चेतन जल को ही प्यासा पाता हूँ।

और जब मैं उसका पान करता हूँ, तब वह मेरा

६८. स्वतंत्रता की ओर	हरिभाऊ उपाध्याय	१॥)
६९. आगे बढो	स्वेट् मार्डेन	॥)
७०. बुद्धवाणी	वियोगी हरि	॥=)
७१. कांग्रेस का इतिहास	डॉ० पट्टाभि सीतारामैया	२॥)
७२. हमारे राष्ट्रपति	सत्यदेव विद्यालंकार	१)
७३. मेरी कहानी	जवाहरलाल नेहरू	२॥))
७४. विश्व-इतिहास की झलक	" "	८) =)
७५. हमारी पुत्रियाँ कैसी हों ?	चतुरसेन शास्त्री	॥)
७६. नया शासन विधान (प्रान्तीय स्वराज्य)	हरिश्चन्द्र गोयल	॥)
७७. (१) हमारे गाँवों की कहानी	स्व० रामदास गौड़	॥)
७८. (२) महाभारत के पात्र—१	आचार्य नानाभाई	॥)
७९. गाँवों का सुधार और संगठन	स्व० रामदास गौड	१)
८०. (३) संतवाणी	वियोगी हरि	॥)
८१ विनाश या इलाज ?	म्यूरियल लेस्टर	॥)
८२. (४) अंग्रेजी राज में हमारी दशा	डॉ० अहमद	॥)
८३ (५) लोक-जीवन	काका कालेलकर	॥)
८४ गीता मंथन	किशोरलाल मशरूवाला	१॥)
८५ (६) राजनीति प्रवेशिका	हेरल्ड लास्की	॥)
८६ (७) हमारे अधिकार और कर्तव्य	कृष्णचन्द्र विद्यालंकार	॥)
८७ गांधीवाद समाजवाद	संपादक काका कालेलकर	॥)
८८ स्वदेशी ग्रामोद्योग	महात्मा गांधी	॥)
८९ (८) सुगम चिकित्सा	चतुरसेन शास्त्री	॥)
९० पिता के पत्र पुत्री के नाम	जवाहरलाल नेहरू	॥)
९१ महात्मा गांधी	रामनाथ 'सुमन'	।=)
९२ हमारे गांव और किसान	सत्यनारसिंह	॥)
९३ ब्रह्मचर्य	महात्मा गांधी	॥)
९४. महात्मा गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ	सम्पादक स० रा०	२।) ३)